वार्षिक रु. १६०, मूल्य रु. १७

ISSN 2582-0656

विवेक ज्योति

रामकृष्ण मिशन
विवेकानन्द आश्रम
रायपुर (छ.ग.)

वर्ष ६१ अंक ३
मार्च २०२३

* आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च *

वर्ष ६१

अंक ३

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

प्रबन्ध सम्पादक
स्वामी अव्ययात्मानन्द

व्यवस्थापक
स्वामी स्थिरानन्द

सम्पादक
स्वामी प्रपत्त्यानन्द

सह-सम्पादक
स्वामी पद्माक्षानन्द

चैत्र, सम्वत् २०७९

मार्च, २०२३

अनुक्रमणिका

* सीता शब्द में सब समाहित है : विवेकानन्द १७५
* श्रीरामकृष्ण का आकर्षण (स्वामी अलोकानन्द) १७७
* होली : सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक परम्परा (योगेशचन्द्र शर्मा) १८५
* (बच्चों का आंगन) भारत की प्रथम महिला गवर्नर (श्रीमती मिताली सिंह) १८९
* विनोदप्रिय श्रीरामकृष्ण (डॉ. अवधेश प्रधान) १९१
* भारतीय साहित्य में श्रीरामचरित का प्रभाव (डॉ. कल्पना मिश्रा) १९५
* (युवा प्रांगण) भारत की सशक्त बेटियाँ (स्वामी गुणदानन्द) १९९
* भगवान थे, हैं और रहेंगे (स्वामी सत्यरूपानन्द) २१२
* (कविता) शिव-स्वरूप हो तुम वीरेश्वर (ओमप्रकाश वर्मा) १८८
* (कविता) सुख-दुख (सदाराम 'स्नेही') १८८
* (कविता) जय रामकृष्ण नरदेव हरे (रामकुमार गौड़) १८८
* महाकालपञ्चकम् (डॉ. सत्येन्दु शर्मा) २०९

शृंखलाएँ

मंगलाचरण (स्तोत्र) १७३
पुरखों की थाती १७३
सम्पादकीय १७५
आध्यात्मिक जिज्ञासा १८३
श्रीरामकृष्ण-गीता १८७
प्रश्नोपनिषद् १९०
सारगाछी की स्मृतियाँ २०१
रामराज्य का स्वरूप २०४
गीतातत्त्व-चिन्तन २०६
साधुओं के पावन प्रसंग २१०
समाचार और सूचनाएँ २१३

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर – ४९२००१ (छ.ग.)

विवेक-ज्योति दूरभाष : ०९८२७१ ९७५३५ (फोन करने का समय केवल सुबह १० से १२)
ई-मेल : **vivekjyotirkmraipur@gmail.com,** वेबसाइट : ***www.rkmraipur.org***
आश्रम कार्यालय : ०७७१ – २२२५२६९, ४०३६९५९ (समय : ८.३० से ११.३० और ३ से ६ बजे तक)
रविवार एवं अन्य अवकाश को छोड़कर

ISSN 2582-0656

विवेक-ज्योति के सदस्य कैसे बनें

भारत में	वार्षिक	५ वर्षों के लिए	१० वर्षों के लिए
एक प्रति १७/–	१६०/-	८००/-	१६००/-
विदेशों में (हवाई डाक से)	५० यू.एस. डॉलर	२५० यू.एस. डॉलर	
संस्थाओं के लिये	२००/–	१०००/–	

* सदस्यता-शुल्क की राशि इलेक्ट्रॉनिक या साधारण मनिआर्डर से भेजें अथवा **ऐट पार** चेक – **'रामकृष्ण मिशन'** (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवाकर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.) ४९२००१ के नाम स्पीड पोस्ट से भेज दें अथवा निम्नलिखित खाते में सीधे जमा करायें :

बैंक का नाम : सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन, रायपुर
शाखा का नाम : रायपुर (छत्तीसगढ़)
अकाउण्ट नम्बर : 1 3 8 5 1 1 6 1 2 4
IFSC : CBIN0280804

आवरण-पृष्ठ के सम्बन्ध में

छत्तीसगढ़ राज्य के जांजगीर-चाँपा जिले के शिवरी-नारायण में नदी के तट पर राम-वनगमन पथ पर यह मूर्ति विद्यमान है। इसी पथ से श्रीरामचन्द्र जी ने वनगमन किया था। आसन पर श्रीरामचन्द्र जी विराजमान हैं, लक्ष्मणजी खड़े हैं तथा शबरी माता नीचे बैठी हुईं हैं और भगवान श्रीरामचन्द्र जी को बेर अर्पण कर रही हैं।

मार्च माह के जयन्ती और त्यौहार

०७	चैतन्य महाप्रभु
११	स्वामी योगानन्द
३०	रामनवमी
३,१८	एकादशी

लेखकों से निवेदन

सम्माननीय लेखको ! गौरवमयी भारतीय संस्कृति के संरक्षण और मानवता के सर्वांगीण विकास में राष्ट्र के सुचिन्तकों, मनीषियों और सुलेखकों का सदा अवर्णनीय योगदान रहा है। विश्वबन्धुत्व की संस्कृति की द्योतक भारतीय सभ्यता ऋषि-मुनियों के जीवन और लेखकों की महान लेखनी से संजीवित रही है। आपसे नम्र निवेदन है कि 'विवेक ज्योति' में अपने अमूल्य लेखों को भेजकर मानव-समाज को सर्वप्रकार से समुन्नत बनाने में सहयोग करें। विवेक ज्योति हेतु रचना भेजते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें –

१. धर्म, दर्शन, शिक्षा, संस्कृति तथा मानव के नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास से सम्बन्धित रचनाओं को 'विवेक-ज्योति' में स्थान दिया जाता है।, **२.** रचना बहुत लम्बी न हो। पत्रिका के दो या अधिकतम चार पृष्ठों में आ जाय। पाण्डुलिपि फूलस्केप रूल्ड कागज पर दोनों ओर यथेष्ट हाशिया छोड़कर स्पष्ट सुन्दर हस्तलेख में लिखी या टाइप की हुयी हो। आप अपनी रचना ई-मेल – vivekjyotirkmraipur@gmail.com से भी भेज सकते हैं।, **३.** लेख में आये उद्धरणों के सन्दर्भ का पूरा विवरण दें।, **४.** आपकी रचना डाक में खो भी सकती है, अत: उसकी एक प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रखें। अस्वीकृति की अवस्था में वापसी के लिये अपना पता लिखा हुआ एक लिफाफा भी भेजें।, **५.** पत्रिका हेतु कवितायें छोटी, सारगर्भित और भावपूर्ण लिखें।, **६.** 'विवेक-ज्योति' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचारों की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी और स्वीकृत रचना में सम्पादक को यथोचित संशोधन करने का पूरा अधिकार होगा। न्यायालय-क्षेत्र रायपुर (छ.ग.) होगा।, **७.** 'विवेक-ज्योति' में मौलिक और अप्रकाशित रचनाओं को ही प्राथमिकता दी जाती है, इसलिये अनुवाद न भेजें। यदि कोई विशिष्ट रचना इसके पहले किसी दूसरी पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी हो, तो उसका उल्लेख अवश्य करें।

'vivek jyoti hindi monthly magazine' के नाम से

अब विवेक-ज्योति पत्रिका यू-ट्यूब चैनल पर सुनें

विवेक-ज्योति कोष/स्थायी कोष

दान दाता	दान-राशि
श्री अनुराग प्रसाद, गाजियाबाद (उ.प्र.)	७,९०१/-
श्री बलवन्त राव किन्हेकर, सिकोलाभाठा, दुर्ग (छ.ग.)	२,०००/-

विवेक-ज्योति के अंक ऑनलाइन नि:शुल्क पढ़ें : www.rkmraipur.org

क्रमांक	विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना के सहयोग कर्ता	प्राप्त-कर्ता (पुस्तकालय/संस्थान)
६९९.	श्री अरुनाभ रॉय, से.-३डी, भोपाल (म.प्र.)	प्यारेलाल यादव, शा.हिन्दू उ.मा. शाला, रायपुर (छ.ग.)
७००.	श्री सलवीर सिंह ठाकरान, गुरुग्राम (हरियाणा)	आर्ष कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, नरेला, दिल्ली

विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना

मनुष्य का उत्थान केवल सकारात्मक विचारों के प्रसार से करना होगा । – स्वामी विवेकानन्द

❖ क्या आप स्वामी विवेकानन्द के स्वप्नों के भारत के नव-निर्माण में योगदान करना चाहते हैं?

❖ क्या आप अनुभव करते हैं कि भारत की कालजयी आध्यात्मिक विरासत, नैतिक आदर्श और महान संस्कृति की युवकों को आवश्यकता है?

✓ यदि हाँ, तो आइए! हमारे भारत के नवनिहाल, भारत के गौरव छात्र-छात्राओं के चारित्रिक-निर्माण और प्रबुद्ध नागरिक बनने में सहायक 'विवेक-ज्योति' को प्रत्येक पुस्तकालय में पहुँचाने में सहयोग कीजिए । आप प्रत्येक पुस्तकालय में पहुँचाने वाली हमारी इस योजना में सहयोग कर अपने राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं । आपका प्रयास हमारे इस महान योजना में सहायक होगा, हम आपके सहयोग की प्रतीक्षा कर रहे हैं –

✍ १. 'विवेक-ज्योति' को विशेषकर भारत के स्कूल, कॉलेज, महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों द्वारा युवकों में प्रचारित करने का लक्ष्य है ।

✍ २. एक पुस्तकालय हेतु मात्र १८००/- रुपये सहयोग करें, इस योजना में सहयोग-कर्ता के द्वारा सूचित किए गए सामुदायिक ग्रन्थालय, या अन्य पुस्तकालय में १० वर्षों तक 'विवेक-ज्योति' प्रेषित की जायेगी ।

✍ ३. यदि सहयोग-कर्ता पुस्तकालय का नाम चयन नहीं कर सकते हैं, तो हम उनकी ओर से पुस्तकालय का चयन कर देंगे । दाता का नाम पुस्तकालय के साथ 'विवेक-ज्योति' में प्रकाशित किया जाएगा । यह योजना केवल भारतीय पुस्तकालयों के लिये है ।

❖ आप अपनी सहयोग-राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीआर्डर या एट पार चेक 'रामकृष्ण मिशन' (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम से बनवाकर पत्र के साथ निम्नलिखित पते पर भेज दें, जिसमें 'विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना' हेतु लिखा हो । आप अपनी सहयोग-राशि निम्नलिखित खाते में सीधे जमा कर सकते हैं । आप इसकी सूचना ई-मेल, फोन और एस. एम.एस. द्वारा अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड एवं फोन नम्बर के साथ भेजें ।

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इन्डिया, अकाउन्ट नम्बर : 1385116124, **IFSC CODE :** CBIN0280804

पता **– व्यवस्थापक, विवेक-ज्योति कार्यालय, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम,**

रायपुर - 492001 (छत्तीसगढ़), दूरभाष – 09827197535, 0771-2225269, 4036959

ई-मेल : vivekjyotirkmraipur@gmail.com, वेबसाइट : www.rkmraipur.org

विवेक-ज्योति स्थायी कोष

'विवेक-ज्योति' पत्रिका स्वामी विवेकानन्द जी की जन्म-शताब्दी वर्ष के शुभ अवसर पर १९६३ ई. में आरम्भ की गई थी । तबसे यह पत्रिका निरन्तर आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और नैतिक विचारों के प्रचार-प्रसार द्वारा समाज को सदाचार, नैतिक और आध्यात्मिक जीवन यापन में सहायता करती चली आ रही है । यह पत्रिका सदा नियमित और सस्ती प्रकाशित होती रहे, इसके लिये विवेक-ज्योति के स्थायी कोष में उदारतापूर्वक दान देकर सहयोग करें । आप अपनी दान-राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीआर्डर, ऐट पार चेक या सीधे बैंक के खाते में उपरोक्त निर्देशानुसार भेज सकते हैं । प्राप्त दान-राशि (न्यूनतम रु. १०००/-) सधन्यवाद सूचित की जाएगी और दानदाता का नाम भी पत्रिका में प्रकाशित होगा । रामकृष्ण मिशन को प्रदत्त सभी दान आयकर अधिनियम-१९६१, धारा-८०जी के अन्तर्गत आयकर मुक्त है ।

सुदर्शन सोलार...
ऊर्जा अपरंपार !

आधुनिक भारत की बिजली की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमारे पास पर्याप्त मात्रा में सौर ऊर्जा उपलब्ध है। प्राकृतिक रुप से उपलब्ध इस स्त्रोत का प्रतिदिन की अपनी आवश्यकताओं के लिये उपयोग करके, अपने बिजली के बिल में भारी पैमाने पर कटौती कर, हम अपने देश को बिजली के निर्माण में आत्मनिर्भर बनाने में सहायता कर सकते हैं।

इस सुन्दर भूमि को सदा हरी-भरी रखने के लिये अपना साथी

भारत का विश्वसनीय सौर ऊर्जा ब्रांड - 'सुदर्शन सौर' !

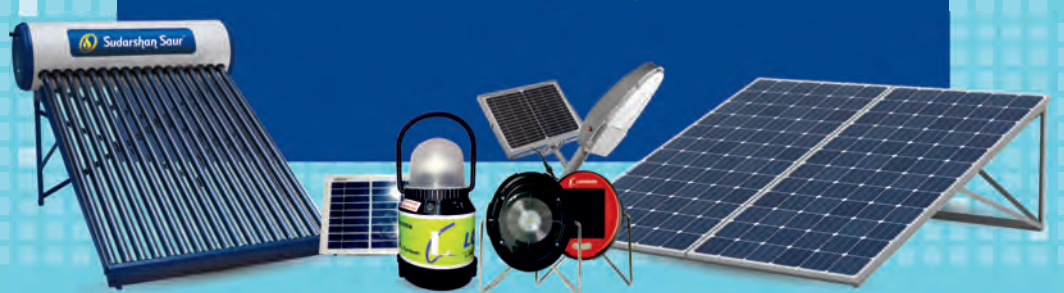

सोलर वॉटर हीटर
24 घंटे गरम पानी के लिए

सोलर लाइटिंग्स
ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू उपयोग के लिए

सोलार इलेक्ट्रिसिटी सिस्टम
रुफटॉप सोलार
बिजली उत्पन्न करने के लिए

घर, बंगलोज, हॉस्पिटल्स, हॉटेल्स, इंडस्ट्रीज, कमर्शिअल कॉम्प्लेक्स, इन्स्टिट्यूट्स के लिए उपयुक्त

समझदारी की सोच!

३० साल का प्रदीर्घ अनुभव!

आजीवन सेवा — लाखों संतुष्ट ग्राहक — विस्तृत डीलर नेटवर्क

Sudarshan Saur®

www.sudarshansaur.com

Toll Free
1800 233 4545

E-mail: office@sudarshansaur.com

।। आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च ।।

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

वर्ष ६१ **मार्च २०२३** **अंक ३**

ब्रह्माजीकृत श्रीरामस्तुतिः

जय राम सदा सुखधाम हरे। रघुनायक सायक चाप धरे ।।
भव बारन दारन सिंह प्रभो। गुन सागर नागर नाथ बिभो ।।
तन काम अनेक अनूप छबी। गुन गावत सिद्ध मुनींद्र कबी।।
जसु पावन रावन नाग महा। खगनाथ जथा करि कोप गहा ।।
जन रंजन भंजन सोक भयं। गतक्रोध सदा प्रभु बोधमयं।।
अवतार उदार अपार गुनं। महि भार बिभंजन ग्यानघनं ।।
अज ब्यापकमेकमनादि सदा। करुनाकर राम नमामि मुदा ।।
रघुबंस बिभूषन दूषन हा। कृत भूप बिभीषन दीन रहा।।
गुन ग्यान निधान अमान अजं। नित राम नमामि बिभुं बिरजं।।
भुजदंड प्रचंड प्रताप बलं। खल बृंद निकंद महा कुसलं ।।
बिनु कारन दीन दयाल हितं। छबि धाम नमामि रमा सहितं।
भव तारन कारन काज परं। मन संभव दारुन दोष हरं ।।
सर चाप मनोहर त्रोन धरं। जलजारुन लोचन भूपबरं ।।
सुख मंदिर सुंदर श्रीरमनं। मद मार मुधा ममता समनं ।।
अनवद्य अखंड न गोचर गो। सबरूप सदा सब होइ न गो ।।
इति बेद बदंति न दंतकथा। रबि आतप भिन्नमभिन्न जथा ।।
कृतकृत्य बिभो सब बानर ए। निरखंति तवानन सादर ए ।।
धिग जीवन देव सरीर हरे। तव भक्ति बिना भव भूलि परे ।।
अब दीनदयाल कृपा करिऐ। मति मोरि बिभेदकरी हरिऐ ।।

पुरखों की थाती

तत्कर्म हरितोषं यत् सा विद्या तन्मतिर्यया।।७८७।।
(भागवत)

– कर्म वही है, जो भगवान की प्रसन्नता के लिये किया जाय और विद्या वही है, जिससे भगवान में चित्त लगे।

तत्कर्म यन्न बन्धाय सा विद्या या विमुक्तये।
आयासायापरं कर्म विद्यान्या शिल्पनैपुणम।।७८८।।
(विष्णु-पुराण)

– सच्चा कर्म वही है जो व्यक्ति को बन्धन में न डाले और सच्ची विद्या वह है जो मुक्ति प्रदान करे। बाकी कर्म तो परिश्रम मात्र हैं और बाकी विद्याएँ कला-कौशल मात्र हैं।

तादृशी जायते बुद्धिर्व्यवसायोऽपि तादृशः।
सहायास्तादृशा एव यादृशी भवितव्यता।।७८९।।

– मनुष्य जैसा (भला या बुरा) भाग्य या प्रारब्ध लेकर आता है, उसकी बुद्धि भी वैसी ही विकसित होती है, उसी के अनुरूप उसे कार्य या रोजगार भी मिलता है। उसी के अनुसार उसे सहयोगी प्राप्त होते हैं।

भारत में जो कुछ पवित्र, विशुद्ध, पावन है, वह सब 'सीता' शब्द में समाहित है : विवेकानन्द

राम और सीता भारत राष्ट्र के आदर्श हैं। सभी बालक-बालिकाएँ, विशेषतः कुमारियाँ सीता की पूजा करती हैं। भारतीय नारी की उच्चतम महत्त्वाकांक्षा यही होती है कि वह सीता के समान शुद्ध, पतिपरायण और सर्वंसहा बने।

सीता भारतीय आदर्श, भारतीय भाव की प्रतिनिधि हैं, मूर्तिमती भारतमाता हैं।...

सीता के चरित्र की भाँति पूरे भारतीय राष्ट्र को आच्छादित और प्रभावित किया हो, उसके जीवन में इतनी गहराई तक प्रवेश किया हो, जो जाति की नस-नस में, उसके रक्त की एक-एक बूँद में इतनी प्रवाहित हुई हो। भारत में जो कुछ पवित्र है, विशुद्ध है, जो कुछ पावन है, उन सबका 'सीता' शब्द से बोध हो जाता है। नारी में जो नारीजनोचित गुण माने गये हैं, 'सीता' शब्द उन सबका परिचायक है। इसलिए जब ब्राह्मण किसी कुल-वधू को आशीर्वाद देते हैं, तो कहते हैं – 'सीता बनो'।

प्राचीन वीर युगों के आदर्श स्वरूप, सत्यपरायणता तथा समग्र नैतिकता के साकार मूर्ति-स्वरूप, आदर्श पति, आदर्श पिता और सर्वोपरि आदर्श राजा-श्रीराम का चरित्र हमारे सम्मुख महान ऋषि वाल्मीकि के द्वारा प्रस्तुत किया गया है।... और सीता के विषय में क्या कहा जाए। तुम संसार के समस्त प्राचीन साहित्य को छान डालो और मैं तुमसे निःसंकोच कहता हूँ कि तुम संसार के भावी साहित्य का भी मन्थन कर सकते हो, परन्तु उसमें से तुम सीता के सामान दूसरा चरित्र नहीं निकाल सकोगे। सीता-चरित्र अद्वितीय है। यह चरित्र सदा के लिए एक ही बार चित्रित हुआ है। राम तो कदाचित् अनेक हो गए हैं, किन्तु सीता दूसरी नहीं हुई। भारतीय स्त्रियों को सीता जैसा होना चाहिए, सीता उनके लिए आदर्श हैं। स्त्री-चरित्र के जितने भारतीय आदर्श हैं, वे सब सीता के ही चरित्र से उत्पन्न हुए हैं।

राम, वृद्ध महाराज (दशरथ) की आत्मा थे, लेकिन वे राजा थे और अपने वचन से पीछे नहीं हट सकते थे।

सीता मूर्तिमान सतीत्व थीं। उन्होंने अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष के शरीर का स्पर्श तक नहीं किया।

'पवित्र? वह तो सतीत्व-स्वरूपिणी है' – राम ने कहा। ...

राम ने अपने शरीर का उत्सर्ग कर परलोक में सीता को प्राप्त किया।

सीता-पवित्र, निर्मल, समस्त दुःख झेलने वाली !

भारत में उस प्रत्येक वस्तु को सीता नाम दिया जाता है, जो शुभ, निर्मल और पवित्र होती है, नारी में नारीत्व का जो गुण है, वह सीता है। सीता – धैर्यवान, सब दुखों को झेलनेवाली, पतिव्रता, नित्य साध्वी पत्नी! उन्होंने समस्त कष्ट झेले, पर राम के विरूद्ध एक भी कठोर शब्द नहीं कहा। सीता में प्रतिहिंसा कभी नहीं थी। 'सीता बनो''।

सम्पादकीय

होली खेलत चन्द्रमणि लाल

होली भारतीय संस्कृति का महत्त्वपूर्ण पर्व है। इस दिन भारत में और अन्य कई भारतेतर देशों में भी होली बड़ी धूम-धाम से मनायी जाती है। होली सामान्यत: धूल, रंग-अबीर, से खेलते हैं और पूआ-पकवान बना कर खाते हैं। विभिन्न राज्यों की भाषा और बोलियों में कई प्रकार के होली

के गीत गाते हैं। एक-दूसरे से मिलकर अबीर लगाते हैं, मिठाई खिलाते हैं आदि। इस प्रकार होली के हमें धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक सद्भाव, समरसता के स्वरूप देखने को मिलते हैं। किन्तु आइये हम होली को भगवान श्रीरामकृष्ण के संग आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास करते हैं। चलिये देखते हैं, दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण की होली कैसे मनाई जा रही है।

श्रीरामकृष्ण के पावन सान्निध्य में होली

रविवार, १ मार्च, १८८५ का दिन है। आज होली है। आज महाप्रभु चैतन्यदेव का जन्मदिवस है। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में अपने कक्ष में छोटे तखत पर समाधिमग्न हो विराजमान हैं। नीचे जमीन पर महिमाचरण, रामदत्त, मनोमोहन, नवाई चैतन्य, नरेन्द्र, मास्टर आदि कितने ही लोग बैठे हुये हैं। भक्तवृन्द एकटक देख रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की समाधि भग्न हुई। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से कह रहे हैं – 'बाबू, हरिभक्ति की कोई बात कहो। महिमाचरण ने नारद-पंचरात्र का मधुर श्लोक का उच्चारण किया –

आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।

नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।।....

''जब नारदजी आराधना कर रहे थे, तब दैववाणी हुई – यदि हरि की आराधना की जाय, तो तपस्या की क्या आवश्यकता? यदि हरि की आराधना न की जाय, तो तपस्या की क्या आवश्यकता? अन्दर-बाहर यदि हरि ही हों, तो तपस्या का क्या प्रयोजन? यदि अन्दर-बाहर हरि न हों, तो तपस्या का क्या प्रयोजन?... हे द्विज शीघ्र ही ज्ञानसिन्धु शंकर के पास जाओ। वैष्णवों ने जिस हरिभक्ति की महिमा गायी है, उस सुपक्व का लाभ करो। इस भक्ति रूपी कटार से भवबन्धन कट जायेंगे।''

उसके बाद बहुत देर तक बहुत सी चर्चाएँ हुईं, सत्संग हुआ, भजन हुए। उसके बाद श्रीरामकृष्ण ने श्रीराधाकान्त मन्दिर में जाकर प्रणाम किया और थाली में से अबीर लेकर श्रीराधाकान्तजी पर चढ़ाया। उसके बाद वे काली मन्दिर गये और माँ को अबीर चढ़ाया। उसके बाद पुन: अपने कक्ष में आकर श्रीरामकृष्ण ने एक-दो चित्रों को छोड़कर सब पर अबीर चढ़ाया। तत्पश्चात् अपने कक्ष से बरामदे में आये। वहीं नरेन्द्र किसी भक्त से बातें कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण ने उन पर अबीर छोड़ा। पुन: अपने कक्ष में प्रवेश करते समय मास्टर पर भी अबीर छोड़ा। कक्ष में जितने भक्त थे, सब पर अबीर छोड़ा। सभी आपको प्रणाम करने लगे। उसके बाद फिर से सत्संग होने लगा। स्तोत्र पाठ हुआ। चैतन्यदेव पर चर्चा हुई। उस दिन की होली इस आध्यात्मिक परिवेश में ईश्वर के चिन्तन, भजन, गायन में ही समाप्त हुई।

श्रीरामकृष्ण के सान्निध्य में दूसरी होली

भगवान श्रीरामकृष्ण देव के साथ होली के दूसरे प्रसंग का उल्लेख पूज्यपाद स्वामी प्रभानन्द जी महाराज की पुस्तक 'श्रीरामकृष्ण की अन्त्यलीला' में मिलता है। २० मार्च, १८८६ को काशीपुर उद्यान में आनन्द का वातावरण है। बहुत-से भक्त लोग आये हुए हैं। भक्त लोग उन्मत्त हो रहे हैं। गिरीश, नरेन्द्रनाथ और मास्टर आये हुये हैं। नरेन्द्र अपने सुरीले कंठ से राधा-विषयक भजन गा रहे हैं – 'केशव भारती के कुटीर में मैंने कैसी अपूर्व ज्योतिर्मय गौरांग मूर्ति देखी।' भक्तवृन्द भाव-विह्वल होकर ठाकुर के कमरे में आये। सबने उनके चरणों में अबीर अर्पित की। ठाकुर ने सबको

आशीर्वाद दिया। कुछ देर बाद कुछ मारवाड़ी भक्त लोग ठाकुर से मिलने आये।

तदनन्तर बगीचे में आम के पेड़ की डाली पर नरेन्द्र और मास्टर महाशय बैठे हुये थे। सामने रामचन्द्र दत्त खड़े थे, वहीं गिरीश घोष भी आ गये। वे होली के मनोभाव में थे। गिरीश ने कहा, मास्टर पर अबीर फेंको, अब आये हैं, तमाशा देखने। मास्टर महाशय दौड़कर भाग गये। इस समय वे गुलाल आदि से बच गये।

बंगले के पूर्व की ओर एक बड़ा-सा तालाब है। तालाब के किनारे भक्तगण एकत्रित हुये हैं। पेड़ के नीचे भी कुछ लोग हैं। वहाँ नित्यगोपाल, अतुलचन्द्र, शरद, कालीप्रसाद आदि हैं। आपस में सन्तों पर चर्चा हो रही है। तत्पश्चात् उद्यान भवन में बड़े उत्साह से होली खेलने लगे। आनन्द में मग्न हो नाच-गान होने लगा। भक्तों के कपड़े गीले और लाल हो गये। मृदंग और झाँझ जोरों से बज रहे हैं। भक्तों का झुंड मतवाला होकर बाहर बगीचे के रास्ते में आया और श्रीरामकृष्ण जहाँ रहते थे, उस श्रीमन्दिर की परिक्रमा करते हुये नाचने लगा।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के आनन्द से आनन्दित थे। भक्तों ने देखा कि प्रभु खिड़की के सामने खड़े हैं, तो वे लोग आनन्दोन्मत्त हो गये। वसन्तोत्सव के आनन्द में सभी निमग्न थे। उन लोगों ने गिरीश के भाई अतुल को रंग से पोत दिया। पाँच-छह लोग उन्हें सिर पर उठाकर उछल-कूदकर नाचने लगे।

होली खेलनेवाले भक्तों में से कुछ लोगों ने काफी शोर-गुल मचाया। श्रीरामकृष्ण को देखकर कोई आनन्द से धरती पर लोटने लगा। कोई मुट्ठियों में अबीर भरकर आकाश में फेंकने लगा। रंगीन गुलाल से परिवेश आनन्दमय हो गया। बगीचे के रास्ते आदि रंग से लाल हो गये। सभी आनन्द में उन्मत्त थे। बहुत से भजन हुये। नरेन्द्रनाथ गाने लगे – सीतापति रामचन्द्र रघुपति रघुराई आदि। इसकी अन्तिम कड़ी नरेन्द्र भूल गये, तो श्रीरामकृष्ण ने खोका (सुबोधानन्द) से लिखवाकर भेज दिया। ठाकुर के भेजने पर उत्साह से नरेन्द्र ने पुन: गाया।

होली के आनन्द में मतवाली भक्त-मंडली से बचने के लिये मास्टर महाशय दुमंजिले पर ठाकुर के कक्ष में चले आये। करुणामय ठाकुर ने मास्टर महाशय के मुख को स्वयं पोंछ दिया और कहा, 'अहा !' प्रेमविह्वल मास्टर ने क्षीण कण्ठ से कहा, 'मैं नहीं, तुँहूँ, तुँहूँ।'

श्रीरामकृष्ण के निवास की प्रदक्षिणा करते हुये होली में मतवाली भक्त-मंडली को श्रीरामकृष्ण ने ऊपर अपने पास बुलाया। इसका वर्णन बैकुण्ठ सान्याल ने इस प्रकार किया है – हमलोग रंग लगाकर भूतों की तरह दीख रहे थे। भूतनाथ (श्रीरामकृष्ण) हम सबको देखना और कृतार्थ करना चाहते थे। इसलिये शशिभूषण को भेजकर उन्होंने हम सबको बुलाया।... प्रभु के मधुर आकर्षण और आह्वान से सभी हर्षित हुये। 'पहले मैं जाऊँगा, पहले मैं जाऊँगा' कहते हुये दौड़-भागकर ऊपर पहुँचे। सबने प्रभु के श्रीचरणों में प्रणाम किया। भूतों को देखकर भूतेश्वर बहुत प्रसन्न हुये। श्रीमाताजी भी अपने भूत-पुत्रों को आनन्द मनाते देखकर प्रसन्न हुईं। उन्होंने सबके लिये प्रचुर मात्रा में प्रसाद भेज दिया। इस प्रकार वसन्तोत्सव की परिसमाप्ति हुई।

किसी कवि ने अपनी लेखनी को सार्थक किया –

होली खेलत चन्द्रमणि लाल।
भक्त सबै मिलि गावत होरी, लगावैं अबीर गुलाल।।
होली खेलत चन्द्रमणि लाल...
नरेन, मास्टर, गिरीश संग खेलें, प्रभु हरिभगत रसाल।
नाचत-गावत, खेलत-कूदत सब भये लाले लाल।।
कोई बजावत झाँझ मृदंगा, कोई बजावे करताल।
पहिल गुलाल दियो गुरु-चरणा, भयो गुरु-कृपा कपाल।।
जीव-ब्रह्म के होत मिलन जस, बन्धन कटत कराल।
गुरु की कृपा मिल्यो भगवन्ता हिय आनन्द विशाल।।

भले ही श्रीरामकृष्ण का स्थूल शरीर हमारे समक्ष नहीं है, किन्तु भावराज्य में हमलोग उनके साथ दक्षिणेश्वर या काशीपुर उद्यान में होली खेल सकते हैं और उस आनन्द की अनुभूति कर सकते हैं।

यह होली भक्त और भगवान के मिलन की होली है। जीव और ब्रह्म के मिलन की होली है। साकार के निराकार में मिलन की होली है। अत: होली के धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक स्वरूप के साथ-साथ आध्यात्मिक स्वरूप को भी अपने जीवन में आश्रय दें और अपने जीवन में सच्चे पावन आनन्द की अनुभूति करें। ○○○

सन्दर्भ-सूत्र – **१.** श्रीरामकृष्ण-वचनामृत **२.** श्रीरामकृष्ण की अन्त्यलीला पृ. ३५४ से ३६० के बीच में

श्रीरामकृष्ण का आकर्षण

स्वामी अलोकानन्द, रामकृष्ण अद्वैत आश्रम, वाराणसी

अनुवाद – अवधेश प्रधान, वाराणसी

(गतांक से आगे)

महेन्द्रनाथ गुप्त

''फूल खिला भौरों का झुण्ड आ जुटा।''

चुम्बक पत्थर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में बैठे हुए थे। सभी उनके आकर्षण से खिंचे हुए आकर उपस्थित हो रहे थे। महेन्द्रनाथ गुप्त जाति से वैश्य थे। विद्यासागर महाशय के विद्यालय में शिक्षक थे। प्राच्य और पाश्चात्य विविध दर्शनों में उनकी अच्छी दक्षता थी। हिन्दू धर्म के शास्त्रों का भी अध्ययन किया था। ब्राह्म समाज में आया-जाया करते थे। निराकार में विश्वास करते थे। कॉलेज की पढ़ाई समाप्त होने से पहले ही उनका गृहस्थाश्रम में प्रवेश हो गया था।

यद्यपि उनका जीवन सर्वांग सुंदर था, फिर भी उसमें कुछ उलटफेर हो गया। उन्हें सांसारिक घात-प्रतिघात का सामना करना पड़ा। आत्महत्या की इच्छा भी मन में जागी। शान्ति प्राप्त करने की आशा से घर छोड़कर वराहनगर में अपने बड़े बहनोई ईशानचन्द्र कविराज के घर में आश्रय लिया। १८८२ ई. का फरवरी का महीना था। पास ही दक्षिणेश्वर के उद्यान में श्रीरामकृष्ण 'डोर खींच' रहे थे। उन्होंने अपनी 'खुली आँखों' गौरांग के सांगोपांगों का दल देखा। उसी दल में उन्होंने महेन्द्रनाथ को देखा।

उसके बाद वह दिन आया, जब उनकी इच्छा पूर्ण हुई। मास्टर सिधू के साथ वराहनगर में एक बगीचे से दूसरे बगीचे में घूमते-घूमते इधर आ गए। आज रविवार है, अवकाश है, इसलिए घूमने आए हैं। श्रीयुत प्रसन्न चटर्जी के बगीचे में कुछ देर पहले घूम रहे थे। तब सिधू ने कहा था, गंगा के किनारे एक सुंदर बगीचा है, क्या वह बगीचा देखने चलेंगे? वहाँ एक परमहंस रहते हैं।''[२५] नाम पहले ही सुन रखा था। लेकिन पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से मुक्तिवादी मन में 'परमहंस' की छाप कुछ जमी नहीं। कौतूहलवश बगीचा देखने के लिए वहाँ पहुँचे। १८८२ ई. की २६ फरवरी थी। शाम होने को थी। विभिन्न प्रकार के फूलों और वृक्षों से युक्त देवालय और दक्षिणवाहिनी गंगा। इस बागान की उपस्थिति अत्यन्त मनोरम थी। जगह मन को अच्छी लगी। उस समय 'परमहंस' क्या कर रहे थे, वह महेन्द्रनाथ ने अपनी डायरी में लिख रखा है, ''शाम होने वाली थी। ठाकुर श्रीरामकृष्ण के कमरे में मास्टर आकर उपस्थित हुए। यही पहली भेंट थी।

देखा कि कमरा लोगों से भरा हुआ है, सब लोग चुपचाप उनके वचनामृत का पान कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण तखत पर पूर्व की ओर मुँह किये बैठे हुए प्रसन्नवदन हो ईश्वरीय चर्चा कर रहे हैं। भक्तगण फर्श पर बैठे हुए हैं। मास्टर खड़े-खड़े आश्चर्यमुग्ध होकर देखने लगे। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ, मानो साक्षात् शुकदेव भागवत-प्रसंग कर रहे हैं और उस स्थान पर सभी तीर्थों का समागम हुआ है अथवा श्रीचैतन्य पुरीधाम में रामानन्द, स्वरूप आदि भक्तों के साथ बैठकर भगवान का गुणगान कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे थे, ''जब एक बार हरिनाम या रामनाम लेते ही रोमांच होता है, अश्रुओं की धारा बहने लगती है, तब निश्चित समझो कि सन्ध्यादि कर्मों की आवश्यकता नहीं रह जाती। तब कर्म-त्याग का अधिकार पैदा हो जाता है, कर्म स्वयं ही छूट जाते हैं। उस अवस्था में केवल रामनाम, हरिनाम या केवल ओंकार का जप करना ही पर्याप्त है।''[२६]

महेन्द्रनाथ गुप्त, 'श्रीम'

जीवन के प्रति हताश और संशयग्रस्त महेन्द्रनाथ अवाक् रह गए। सोचने लगे, ''अहा ! क्या ही सुंदर स्थान है। ये कितने सुंदर मनुष्य हैं ! कितनी सुंदर बातें हैं इनकी ! यहाँ से हिलने तक की इच्छा नहीं हो रही है।''[२७] लोहा चुम्बक का आकर्षण अनुभव करने लगा। महेन्द्रनाथ ने श्रीरामकृष्ण से आकर्षण का अनुभव किया। महेन्द्रनाथ आजीवन श्रीरामकृष्ण रूपी बोधिवृक्ष के नीचे एकाग्रचित्त ध्यानमग्न होकर रहे।

यह तो हुई लोहे की प्रतिक्रिया। लेकिन चुम्बक? ठाकुरबाड़ी में संध्या की आरती के वाद्य बज उठे। महेन्द्रनाथ सिधू के साथ श्रीरामकृष्ण के कमरे में उपस्थित हुए। सर्वत्र धूप की सुगंध फैल रही थी। परमहंस तखत पर बैठे हुए थे। महेन्द्रनाथ ने प्रणति निवेदित की। श्रीरामकृष्ण ने 'कहाँ रहते हो, क्या करते हो' जैसे कुछ प्रश्न किए। लेकिन सहसा भावराज्य में चले गए। महेन्द्रनाथ ने सोचा, यह भगवान के ध्यान-चिन्तन का समय है। इसीलिए एक-दो बातों के बाद विदा ली। श्रीरामकृष्ण ने 'फिर आना कहकर विदा दी।' महेन्द्रनाथ के मन में आया, ''ये सौम्य पुरुष कौन हैं? जिनके पास फिर लौट चलने की इच्छा हो रही है?''[२८] श्रीरामकृष्ण पुस्तक नहीं पढ़ते, वृन्दा दासी के मुँह से यह बात सुनकर महेन्द्रनाथ का पुस्तकें पढ़े होने का अहंकार चूर्ण हो गया। सोचने लगे कि किस शक्ति के बल से ये इतने बड़े ज्ञान के भण्डार हैं? कुछ दिन बाद ही महेन्द्रनाथ फिर आए। इस बार दूसरी भेंट के दिन विवाह और संतान होने के बारे में श्रीरामकृष्ण की प्रतिक्रिया ने उनके अहंकार को कुछ और चूर्ण किया। ''अच्छा, तुम्हारा परिवार कैसा है? विद्या शक्ति है या अविद्या शक्ति?''[२९] श्रीरामकृष्ण के इस प्रश्न के उत्तर में 'अक्षरज्ञान से सम्पन्न व्यक्ति ज्ञानी होता है, इस प्रकार की बुद्धि से युक्त महेन्द्रनाथ ने कहा, ''जी, अच्छी है, किन्तु अज्ञान है।[३०] श्रीरामकृष्ण पुन: उनके अहंकार पर प्रहार करते हुए बोले, ''और तुम ज्ञानी हो?''[३१] ज्ञानी और अज्ञानी की नई यह परिभाषा पता चली, ''ईश्वर को जानना ही ज्ञान है, ईश्वर को न जानने का ही नाम अज्ञान है।''[३२]

लेकिन अभी और कुछ बाकी था। प्रसंग उठा – उनका साकार में विश्वास है या निराकार में? महेन्द्रनाथ ने बताया, उनका निराकार में विश्वास है, तब श्रीरामकृष्ण बोले, ''यह अच्छा है। एक पर विश्वास होने से ही हुआ। निराकार में विश्वास है, यह तो अच्छी बात है। लेकिन यह बुद्धि मत रखना कि केवल यही सत्य है और शेष सब मिथ्या है। यह जानना कि निराकार भी सत्य है, फिर साकार भी सत्य है। तुम्हारा जो विश्वास है उसी को पकड़े रहना।''[३३]

महेन्द्रनाथ के मन में संशय था – एक ही साथ साकार और निराकार कैसे सम्भव है? इसीलिए पुस्तक-पाठी ज्ञानी महेन्द्रनाथ ने बात उठाई ; ''जी, वे साकार हैं, यह विश्वास तो ठीक है ! ... लेकिन मिट्टी की प्रतिमा तो वे नहीं हैं, ... जो मिट्टी की प्रतिमा की पूजा करते हैं, उन्हें यह बात समझा देना चाहिये कि मिट्टी की प्रतिमा ईश्वर नहीं है और प्रतिमा के सामने ईश्वर की ही पूजा करना उचित है।[३४]

चुम्बक श्रीरामकृष्ण ने एक जोरदार चोट की, ''तुम्हारे

कलकत्ते के आदमियों में यही एक धुन सवार है – केवल लेक्चर देना और दूसरों को समझाना ! अपने को कौन समझाए, इसका ठिकाना नहीं। अजी, समझाने वाले तुम हो कौन? जिनका संसार है, वे समझाएँगे। जिन्होंने सृष्टि रची है, सूर्य-चन्द्र, मनुष्य, जीव-जन्तु बनाए हैं, जीव जन्तुओं के भोजन के उपाय सोचे हैं, उनका पालन करने के लिए माता-पिता बनाए हैं, माता-पिता में स्नेह का संचार किया है, वे समझाएँगे। इतने उपाय तो उन्होंने किए और यह उपाय वे नहीं करेंगे? अगर समझाने की जरूरत होगी, तो वे समझाएँगे, क्योंकि वे अन्तर्यामी हैं। यदि मिट्टी की मूर्ति पूजने में कोई भूल होगी, तो क्या वे नहीं जानते कि पूजा उन्हीं की हो रही है? वे उसी पूजा से संतुष्ट होते हैं। इसके लिए तुम्हारा सिर क्यों धमक रहा है? तुम यह चेष्टा करो, जिससे तुम्हें ज्ञान हो, भक्ति हो।''[३५]

महेन्द्रनाथ की प्रतिक्रिया और आत्मसमर्पण उनकी अपनी ही भाषा में इस प्रकार है, ''अब शायद उनका अहंकार बिलकुल चूर्ण हो गया।''

''वे सोचने लगे, 'ये जो कह रहे हैं, वह ठीक ही तो है। मुझे दूसरों को समझाने की क्या आवश्यकता है? क्या मैंने ईश्वर को जान लिया है या मुझमें उनके प्रति विशुद्ध भक्ति उत्पन्न हुई? स्वयं के सोने के लिए जगह नहीं है और दूसरे लोगों को न्यौता दे रहे हैं ! स्वयं को कुछ ज्ञान नहीं, अनुभव नहीं है और दूसरों को समझाने चले हैं ! वास्तव में कितनी लज्जा की बात है, कितनी हीन बुद्धि का काम है ! क्या यह गणित, इतिहास या साहित्य है कि दूसरों को समझा दे? यह ईश्वरीय ज्ञान है। ये जो बातें कह रहे हैं, कैसे हृदय को स्पर्श कर गयी हैं।''

श्रीरामकृष्ण के साथ यही उनका प्रथम और अन्तिम तर्क था।''[३६]

इसके बाद महेन्द्रनाथ अवसर मिलते ही नियमानुसार श्रीरामकृष्ण के समीप उपस्थित होकर एकाग्र मन से उनका कथामृत पान करते और अपनी डायरी में नोट करते। रामकृष्ण के कथामृत का यह संग्रह केवल 'आत्मनो मोक्षार्थं' नहीं था, 'जगद्धिताय' भी था। इन संक्षिप्त नोटों से ही कलियुग के भागवत ''श्रीश्रीरामकृष्ण कथामृत'' (श्रीरामकृष्ण-वचनामृत) नामक ग्रंथ का जन्म हुआ, जो आज भी प्रत्येक सांसारिक ताप से दग्ध जीव के जीवन में अमृत प्रवाहित करता है। परवर्ती काल में वे कहा करते थे, ''लोग समुद्र में जाते हैं, कोई बड़ा घड़ा लेकर, कोई कलसी लेकर, कोई लोटा लेकर। सब अपना-अपना पात्र भरकर जल लेकर आते हैं और सबको उसमें से थोड़ा-थोड़ा जल देते हैं।''[३७] अफीम के आकर्षण से मोर के आने का उदाहरण देकर श्रीरामकृष्ण उनको देखते ही विनोद करते हुए कहते, ''वह देखो, फिर आ रहा है !''[३८] आना ही पड़ेगा, क्योंकि यह आकर्षण तो दुर्निवार है !

श्रीम से सम्बन्धित वस्तुएँ

एक बार वैशाख की धूप में पैदल चलकर पसीने से तरबतर महेन्द्रनाथ कलकत्ता से दक्षिणेश्वर पहुँचे। उनको देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा, ''इसके भीतर (अपने शरीर को दिखाकर) कुछ विशेष है, जिसके आकर्षण से इंग्लिशमैन भी दौड़े आते हैं।''[३९] इस आकर्षण का कारण भी उन्हीं के मुँह से सुनिए, ''तुम्हारा यहाँ के प्रति इतना आकर्षण क्यों है? कलकत्ता में अनगिनत लोग रहते

हैं, उनमें से किसी का प्रेम नहीं हुआ, तुम्हारा ही क्यों हुआ? इसका कारण है, पिछले जन्मों का संस्कार।''[४०] फिर कहा, ''देखो, तुम्हारा घर, तुम कौन हो, तुम्हारा बाहर-भीतर, तुम्हारी पहले की बातें, तुम्हारा बाद में क्या होगा, यह सब तो मैं जानता हूँ।''[४१] ''इन्हीं आँखों से गौरांग के सब सांगोपांग को देखा था। उसके भीतर तुम्हें भी देखा था।''[४२] और फिर सबसे ऊँची बात कही, ''तुम्हें पहचान गया हूँ। तुमने चैतन्य भागवत पढ़ा-सुना है। तुम अपने जन हो, एक सत्ता – जैसे पिता और पुत्र।''[४३]

श्रुति कहती है, ''तमेव विदित्वा अतिमृत्युमेति'' – उनको जानकर मृत्यु के परे की सत्ता को प्राप्त किया जाता है। मृत्युपथगामी महेन्द्रनाथ या मास्टर महाशय दक्षिणेश्वर उद्यान में उसी परम तत्त्व को प्राप्त करके अमर हो गए। और अपना जन, पुत्र होकर कलियुग के भागवत ''श्रीरामकृष्ण-वचनामृत'' के रूप में, पिता की वाणी का सर्वलोक में प्रचार कर गए। कथामृत के स्वरूप को समझाने के लिए मास्टर महाशय ने ग्रंथ के प्रारम्भ में भागवत के गोपीगीत का यह श्लोक उद्धृत किया है –

''तव कथामृतं तप्त जीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंगलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति ये भूरिदा जनाः।।''[४४]

जिस प्रकार लोहा चुम्बक के आकर्षण की उपेक्षा नहीं कर सकता, उसी प्रकार श्रीरामकृष्ण का दुर्निवार आकर्षण भी मास्टर महाशय को बार-बार श्रीरामकृष्ण के समीप खींच लाता है।

देवेन्द्रनाथ मजूमदार

देवेन्द्रनाथ 'महिला' नामक काव्य के प्रणेता सुरेन्द्रनाथ के भाई थे। नाटे कद के, गोरे, स्वभाव से शान्त। जमींदारी कार्यालय में काम करते थे और कलकत्ता में एक आत्मीय के घर में रहते थे। योगाभ्यास किया करते थे। भाई सुरेन्द्रनाथ के प्रभाव से साहित्य-चर्चा भी किया करते थे। आध्यात्मिक साधना की प्रेरणा से कुछ दिन पाथुरिया घाट की ठाकुरबाड़ी के तितल्ले पर एक निजी कोठरी में रहते थे। अन्त में साधना के फलस्वरूप एक गीत की रचना हुई – 'कौन तुमको जान सकता है' इत्यादि। इसी अवसर पर 'साधु अघोरनाथ की जीवनी' पढ़कर एक दिन वे चीत्कार कर उठे,''कौन कहता है, भगवान नहीं हैं? देख रहा हूँ, भगवान हैं, नहीं तो अघोरनाथ की रक्षा किसने की ?''[४५] किवाड़ बंद करके भगवान की खोज शुरू हो गई। तीन दिन तीन रात न भोजन किया, न सोए। चौथे दिन उगते हुए सूर्य को देखकर बोल उठे, ''कौन कहता है, भगवान नहीं हैं? यह है भगवान का नमूना।''[४६] साथ ही साथ मन कहता, 'गुरु चाहिए।'[४७] ''गुरु के बिना गति नहीं है।''[४८] गोस्वामी तुलसीदास ने भी कहा है – ''गुरु बिन भवनिधि तरइ न कोइ। जौ बिरंचि संकर सम होइ।'' अर्थात् गुरु को छोड़कर कोई भवसागर पार नहीं करा सकता, वह ब्रह्मा और शंकर के समान हो, तो भी नहीं।

इसलिए देवेन्द्रनाथ गुरु की खोज में कालना के भगवानदास बाबाजी के यहाँ जाने को तैयार हुए। घाट पर पहुँचे, तो पता चला, उस दिन कालना को जानेवाला स्टीमर चला गया है। लौटकर नगेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय के घर पहुँचे। उनके सामने एक पुस्तक दिखाई पड़ी – भक्ति चैतन्य चंद्रिका। जो पृष्ठ उन्होंने खोला उस पर लिखा था – ''दक्षिणेश्वर स्थित राममणि के मन्दिर के श्रीरामकृष्ण देव का भी यही मत है।''[४९] तत्काल सिद्धानुग्रहण और अहीरीटोला घाट से दक्षिणेश्वर जानेवाली नाव में चढ़ गए। घाट पर उतरे। एक व्यक्ति से पूछकर परमहंस के निवास पर पहुँचे। कमरा सूना था। इधर-उधर कर रहे थे, इसी समय स्लीपर पहने एक व्यक्ति आए, कंधे पर धोती का एक छोर झूल रहा था। देवेन्द्रनाथ के मन में आया, न जटा जूट है, न गेरुआ, न चिमटा, कुछ भी नहीं, तो भी, क्या ये वही परमहंस हैं। भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया, तो श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा, ''इधर से कमरे के भीतर आओ।''[५०] कमरे में प्रवेश करके एक बार और प्रणाम किया और आसन पर बैठ गए। श्रीरामकृष्ण ने पूछा – ''कहाँ से आना हो रहा है।''

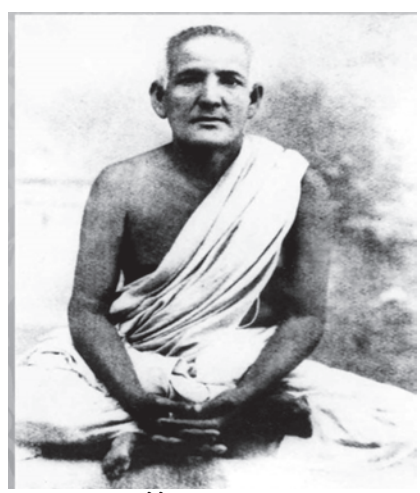
देवेन्द्रनाथ मजूमदार

देवेन्द्र – ''कलकत्ता से।''[५१]

श्रीरामकृष्ण – ''(वंशीधर श्रीकृष्ण की मुद्रा बनाकर) कि ऐसे-ऐसे ठाकुर देखने आए हो, ठाकुर देखने आए हो?[५२]

देवेन्द्र – ''नहीं, आपको देखने।''

श्रीरामकृष्ण – (कातर स्वर में) ''मुझको और क्या देखोगे, बोलो? गिरकर मेरा हाथ टूट गया है। हाथ लगाकर देखो न ! यहाँ, इस जगह। देखो, हड्डी तो नहीं टूटी है? बड़ा दर्द है, क्या करूँ?'' देवेन्द्रनाथ ने उस जगह स्पर्श किया, तो श्रीरामकृष्ण ने फिर पूछा – ''क्यों जी, ठीक तो हो जाएगा न?'' देवेन्द्र ने कहा, ''जी, ठीक हो जाएगा।'' श्रीरामकृष्ण ने उत्साहपूर्वक सबसे कहा, ''सुनो जी, ये कह रहे हैं, मेरा हाथ ठीक हो जाएगा। ये कलकत्ता से आए हैं।'' देवेन्द्र के मन में प्रतिक्रिया हुई – ''यह ढोंग तो नहीं है? कहाँ तो मैं साधु-दर्शन को आया और इन्होंने मुझको ही साधु बना दिया ! इन्होंने जैसे मुझको वाक् सिद्ध समझ लिया। इनका कैसा विश्वास है। ऐसा सरल विश्वास क्या मनुष्य में हो सकता है? नहीं, शायद यह सब कुछ लोक-प्रदर्शन है, ढोंग है !''[५३]

सचेतन रूप से देवेन्द्रनाथ लक्ष्य कर रहे हैं। सोच रहे हैं, यह सरलता है या ढोंग है? व्यवहार-कुशल श्रीरामकृष्ण ने उन्हें कुछ संदेश, जल आदि जलपान के लिए दिया। जलपान के बाद भगवत् प्रेम के बारे में श्रीरामकृष्ण ने कहा, ''देखो, प्रेम किसको कहते हैं, जानते हो? जब भगवान के नाम के आगे सारा जगत् विस्मृत हो जाएगा, अपने आप को विस्मृत कर देंगे, आँधी आने पर जैसे पेड़-पौधे पहचान में नहीं आते, सब एक जैसे दिखते हैं, उसी प्रकार भगवत् प्रेम का उदय होने पर सब भेदबुद्धि चली जाती है।''[५४]

देवेन्द्रनाथ की सारी तर्क-युक्ति समाप्त हो गई। मन ही मन निश्चय कर लिया, ये ही वे महाशान्ति दाता हैं। ''मन में लगा, ऐसी बात पहले कभी नहीं सुनी।...विश्वास न होने पर भी वह बात प्राण में बज रही है और रामकृष्ण देव के चेहरे पर कैसी अनिर्वचनीयता रहती है ! वह अनिर्वचनीयता उनके सौंदर्य में, गठन में, मनमोहक गौरवर्ण में नहीं है; फिर भी वह इस सबकी अपेक्षा अधिक आकर्षक है, बार-बार उनकी ओर निहारने को विवश होते हैं।[५५]

चुम्बकीय आकर्षण बहुत पहले ही शुरू हो गया था। इसलिये कालना जाना नहीं हो पाया। मित्र के घर 'भक्ति चैतन्य चंद्रिका' का वह अंश पढ़ना, तत्काल एक निर्णय पर पहुँचना और फिर दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण के सान्निध्य में देवेन्द्रनाथ की उपस्थिति। अब लोहे के भीतर चुम्बकीय आकर्षण की क्रिया धीरे-धीरे संचारित होने लगी।

दोपहर में प्रसाद ग्रहण और विश्राम के बाद श्रीरामकृष्ण के समीप उपस्थित होने पर देवेन्द्र को शरीर में ज्वर का अनुभव हुआ। श्रीरामकृष्ण ने किसी भक्त को साथ लगाकर उन्हें घर पहुँचा देने की व्यवस्था कर दी। रास्ते में किसी आत्मीय के घर ठहर गए। इस रोग में ४१ दिन बीत गए। बीच-बीच में परमहंस देव के नाम का उच्चारण करते। रोग की मंत्रणा से परेशान होकर इधर-उधर देखने पर श्रीरामकृष्ण को सिरहाने खड़े पाते। चुम्बक ने लोहे को पकड़ रखा था। किन्तु आरोग्य हो जाने के बाद दक्षिणेश्वर के नाम पर उन्हें आतंक अनुभव होता। वे मन को समझाते, ''वहाँ जाने पर वे तुम्हें चतुर्भुज रूप का दर्शन करा देंगे – ना? गए तो थे, कैसा भगवान देख आए? बाप रे ! जान निकल गई। इससे अच्छा है, जो कर सकते हो, वही क्यों नहीं करते ! ब्राह्मण के लड़के हो, निःसहाय तो नहीं हो। गायत्री का ही अच्छी तरह जप क्यों नहीं करते?''[५६] निश्चय दृढ़ करके देवेन्द्रनाथ सोचने लगे, ''साधु दर्शन से लोगों का मंगल होता है, लेकिन इधर तो बाबा जैसे जान निकल गई ! बहुत हुआ, अब और नहीं; साधु हैं, मेरे सिर पर रहें !''[५७]

दक्षिणेश्वर जाना बन्द हो गया। दिन बीतने लगे। सहसा एक दिन शाम को नगेन्द्र मुखोपाध्याय के बैठकखाने में देवेन्द्रनाथ ने 'सुलभ समाचार' में पढ़ा, ''आज पाँच बजे श्रीरामकृष्ण परमहंस महाशय बागबाजार में श्रीयुत बलराम बसु महाशय के मकान पर भक्तों के साथ मिलेंगे।'' आकर्षण की उपेक्षा सम्भव न हुई। परमहंस नाम की विमोहिनी शक्ति ने फिर उनको विचलित कर दिया।''[५८] शाम को देवेन्द्र बलराम भवन में उपस्थित हुए। कीर्तन में सभी मतवाले हो रहे थे। श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गए। लज्जित देवेन्द्र ने इस अवसर पर अपने को गोपन रखकर उनकी पदधूलि ग्रहण कर ली। सहसा प्रणाम करते हुए देवेन्द्र की पीठ पर हाथ रखते हुए ठाकुर बोले, ''क्यों जी, कैसे हो? इतने दिनों तक वहाँ गए क्यों नही? मैं अक्सर तुम्हारी बात सोचता हूँ।''[५९] फिर कहा, ''अभी ठहर जाओ, वहाँ क्यों, जाओगे तो?'' देवेन्द्र ने भी स्वीकृति दी, ''जी, जाऊँगा।''[६०]

इसके बाद देवेन्द्र ने श्रीरामकृष्ण के अत्यन्त अन्तरंग के रूप में जीवन-मन-प्राण सब समर्पण कर दिया। एक अन्य दिन ठाकुर ने परीक्षा ली। पूछा – ''अच्छा, तुम यहाँ आते जाते हो, बताओ क्या समझा? क्या हुआ?'' देवेन्द्र ने उत्तर दिया, ''महाशय, ऐसा कुछ विशेष तो समझ नहीं पाता हूँ, फिर भी धर्म के सम्बन्ध में, ईश्वर के सम्बन्ध में जानने के लिए और कहीं जाने की इच्छा नहीं होती और मन भी वैसी चीत्कार-पुकार नहीं मचाता।'' ठाकुर ने कहा, ''तुमने बहुत कुछ किया है, लेकिन हर म्यान में तलवार नहीं जाती। जानते हो, क्या बात है? जो जिस घर का है, उसी घर में पहुँचकर उसको शान्ति मिलती है।''[६१]

देवेन्द्रनाथ श्रीरामकृष्ण के घर के थे। जिस प्रकार श्रीरामकृष्ण ने उनकी विभिन्न प्रकार से परीक्षा लेने के बाद ग्रहण किया था, उसी प्रकार देवेन्द्र ने भी कामिनी-कांचन त्याग के विषय में श्रीरामकृष्ण की परीक्षा ली। एक दिन उन्होंने ठाकुर की अनुपस्थिति में उनकी तोशक के नीचे एक रुपया से आना तक रख दिया। ठाकुर लौटकर चौकी पर बैठने जा रहे थे, लेकिन बैठ नहीं पाए। प्रश्न किया, ''क्यों जी, ऐसा क्यों हो रहा है? मैं बिछौना क्यों नहीं स्पर्श कर पा रहा हूँ? तब देवेन्द्र ने लज्जा से अपराध स्वीकार कर लिया। ठाकुर ने कहा, ''क्यों, मेरी परीक्षा लेकर देख रहे हो? यह अच्छा है, अच्छा है !''[६२]

कांचनत्यागी श्रीरामकृष्ण की इस बार कामिनी-त्याग की परीक्षा थी। एक दिन ठाकुर ने दक्षिणेश्वर में देवेन्द्र से कहा, एक महिला के लिए उनका मन कैसा तो कर रहा है। यह महिला उन पर प्रेम रखती थी। उनका भेजा रसगुल्ला लाकर देवेन्द्र को खिलाया। देवेन्द्र का संदेह घना हो गया। बाद में ठाकुर इन महिला के यहाँ जाने के लिए गाड़ी पर चढ़े, तो देवेन्द्र को भी साथ चलने को कहा। रास्ते में वेश्याओं को देखकर ठाकुर ने 'माँ आनन्दमयी' कहकर उन्हें प्रणाम किया। देवेन्द्र का शरीर दबाकर बोले, ''मैं किसी का भाव नष्ट नहीं करता।''[६३] गाड़ी नंदुलाल मल्लिक के मकान पर जा पहुँची। ठाकुर अकेले ही सीधे भीतर चले गए। देवेन्द्र का संदेह चरम पर पहुँच गया। साथ में मास्टर महाशय थे, उन्होंने गाना शुरू किया, ''गोरा का साथी होकर भी भाव समझ नहीं पाया रे, गोरा वन देखकर वृन्दावन के बारे में सोचता है, गोरा किस भाव में मतवाला है, मैं भाव समझ नहीं पाया रे।''[६४] ठाकुर ने भी बाहर आकर बाकी हिस्सा गाया।

अन्त:पुर में जलपान का आमंत्रण था। ठाकुर गए। इसके बाद की घटना 'भक्तमालिका' की भाषा में देखिए – ''थोड़ी देर बाद बुलाने पर देवेन्द्र आदि ने भी भीतर प्रवेश करके देखा, एक वृद्धा वात्सल्य भाव से भरकर सजल नयन श्रीरामकृष्ण के बगल में बैठकर उनको खिला रही है और ठाकुर भी पाँच साल के बच्चे के समान जैसी तैसी दशा में बैठे हैं। इस प्रकार स्वर्गीय हृदय का दर्शन करके देवेन्द्र का संदेहाकुल मन धिक्कारभाव से भर गया और वे दुष्ट मन के प्रायश्चित के लिए कुछ देर तक जलपान की बात भूलकर उसी वात्सल्य माधुरी का आस्वादन करने लगे। देवेन्द्र को बाद में पता चला, यह भक्तिमती महिला यदुबाबू की मौसी हैं।''[६५]

चुम्बक के खिंचाव से लोहा खिंचकर आ गया। यह तो 'स्वांग' नहीं, एक 'अनिर्वचनीय विमोहिनी शक्ति' का आकर्षण है। 'एक नया मनुष्य आया है', वे 'जित कामिनी-कांचन' हैं। देवेन्द्र ने प्रार्थना की, 'हे मेरे मन-मधुप रामकृष्ण के चरण-कमल में लीन हो जा।' और उन्होंने आर्त-पीड़ित-शरणागत जन के मन में आशा का संचार करते हुए समवेत प्रार्थना की – ''शरणागत किंकर भीत मने। गुरुदेव दया कर दीन जने।।'' – हे गुरुदेव ! भयभीत शरणागत दीन सेवक पर दया कीजिए।'' **(क्रमश:)**

सन्दर्भ ग्रन्थ – २५. श्रीरामकृष्णवचनामृत, पृ. १४ **२६.** वही, पृ. १४ **२७.** वही, **२८.** वही, पृ. १६, **२९.** वही, पृ.१८ **३०.** वही, **३१.** वही, **३२.** वही, **३३.** वही, **३४.** वही, पृ. १९, **३५.** वही, **३६.** वही **३७.** अमृतरूप श्रीरामकृष्ण (बंगला) पृ.१७३ **३८.** कथामृत, पृ. ३१ **३९.** भक्तमालिका, द्वितीय भाग, पृ. २१९ **४०.** वही **४१.** कथामृत ४/९/४, पृ.६१ **४२.** वही, २/११/२ पृ.८९ **४३.** वही, ४/८/२, पृ. ४५ **४४.** श्रीमद्भागवतम् १०/३१/९ **४५.** श्रीरामकृष्ण भक्तमालिका, द्वितीय भाग, पृ.३३६ **४६.** वही, पृ. ३३६ **४७.** वही **४८.** श्रीरामकृष्ण चरित–गुरुदास वर्मन, भाग-१, पृ. २७५ **४९.** वही पृ.२७६ **५०.** वही, पृ.२१८ **५१.**भक्तमालिका, भाग-२, पृ.३३७ **५२.** श्रीरामकृष्ण चरित, भाग-१ पृ.२७८ **५३.** भक्तमालिका, भाग-२, पृ. ३३७-३८ **५४.** श्रीरामकृष्ण चरित, भाग-१, पृ.२७९-८० **५५.** वही, पृ.२८०-८१ **५६.** भक्तमालिका, भाग-२, पृ.३३९ **५७.** श्रीरामकृष्ण चरित, भाग-१, पृ.२८४ **५८.** भक्तमालिका, भाग-२, पृ.८१ **५९.** वही, पृ.३३९ **६०.** वही, पृ. ३४० **६१.** वही, पृ.३४१ **६२.** वही, पृ.३४३ **६३.** वही **६४.** वही **६५.** वही, पृ.३४४

आध्यात्मिक जिज्ञासा (८६)

स्वामी भूतेशानन्द

– और एक बात कही जाती है महाराज ! स्वामीजी ग्रामीण लोगों का सर्वांगीण विकास चाहते थे – शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के क्षेत्र में, किन्तु हमारे आश्रम तो लगभग सभी नगर में, शहर में केन्द्रित हैं।

महाराज – नहीं, नगर केन्द्रित नहीं है। जैसे मान लो, नरेन्द्रपुर है। उनलोगों का कार्य तो गाँव में ही है, नगर में नहीं है।

– उनलोगों की एक ग्रामीण शाखा भी है – 'लोक शिक्षा परिषद'।

महाराज – इसके अतिरिक्त उनलोगों का जैसा संस्थान है, उसमें हमलोग ऐसा नहीं करते हैं। केवल शहर, नगर के लोग ही उससे लाभान्वित होंगे, इस दृष्टि से हमलोग कार्य नहीं करते हैं। हाँ, किन्तु शहर में हमलोगों के उत्सव, कार्यक्रम, संस्थान अधिक हैं। इसका कारण है, वहाँ के लोगों ने सहायता कर हमलोगों के संस्थान को निर्मित करने का सुअवसर प्रदान किया है। इसीलिए शहर में है। किन्तु बाहर के छात्र भी तो बहुत आते हैं। स्कूल में जैसे बाहर के छात्र आते हैं, अस्पताल में भी बाहर के लोग आते हैं। शहर के लोगों की तुलना में बाहर के लोग बहुत कम आते हैं, ऐसी बात नहीं है। स्वामीजी ने जब कहा था, तब की परिस्थिति दूसरे प्रकार की थी। उन्होंने कहा था – गाँव-गाँव में जाकर मैजिक लालटेन लेकर उनलोगों को सिखाना होगा। अभी वैसी आवश्यकता नहीं पड़ती है। अभी धारा दूसरे प्रकार की हुई है। हमलोग स्कूल के कार्य में गाँव के लोगों की सहायता नहीं पाते हैं, ऐसा नहीं है, किन्तु शहर में लगता है अधिक है। जैसे डिस्पेन्सरी आदि। इसके अतिरिक्त ग्राम के विकास हेतु भी प्रयास हो रहा है। सीमित होने पर भी हो रहा है। ग्राम-सेवा करने का बहुत से स्थानों पर प्रयास किया जा रहा है।

प्रश्न – हमलोगों का संस्थान रामकृष्ण मिशन वास्तव में एक आध्यात्मिक संगठन है। आध्यात्मिकता को लेकर ही इसका जन्म हुआ है। आध्यात्मिक नव-जागरण में रामकृष्ण मिशन साधु-समाज में कितना परिवर्तन ला सका है? भारतीय साधु-समाज की धारा में रामकृष्ण मिशन कितना रूपान्तरण ला सका है?

महाराज – साधु-समाज में एक भाव आया है, इसे सभी लोग समझ रहे हैं कि उन्हें थोड़ी सेवा करनी है। इतने दिनों तक इस ओर दृष्टि नहीं थी। किन्तु सेवा अभी सभी केन्द्रों में अल्पाधिक होती है। साधु-समाज में भी थोड़ी सेवा-भावना रखने का प्रयास हो रहा है। यही एक विशेष योगदान कह सकता हूँ।

– पुराने साधु-समाज ने तो पहले रामकृष्ण मिशन को स्वीकार ही नहीं किया।

महाराज – नहीं किया। किन्तु अभी स्वीकार कर रहे हैं। इसके लिए दृष्टिकोण भी बदल रहा है।

– एक बात मैंने सुनी थी कि ठाकुर की जन्म-शताब्दी में निरंजनी अखाड़ा ने अपने सोने के सिंहासन पर ठाकुर का चित्र रखा था। जिसे भारतीय अवतार के रूप में माना जाता है, उसे वे सोने के सिंहासन पर बैठाते हैं।

महाराज – इसके बारे में मैं नहीं जानता।

– जन्म-शताब्दी में उनलोगों ने उस सिंहासन को शोभायात्रा में ठाकुर का चित्र बैठाने के लिये दिया था।

महाराज – मैं कुछ नहीं कह सकता। वे लोग ठाकुर को स्वीकार करते हैं। परन्तु हमलोगों के कार्यों को इतना स्वीकार नहीं करते थे। ठाकुर को स्वीकार करने के लिये उनके हृदय में स्थान आरक्षित है। इसके सिवाय अभी हमलोगों के कार्यों की प्रशंसा करते हैं, किन्तु अपने जीवन को उस दिशा में प्रवाहित करने में बहुत चेष्टा करते हैं, ऐसा नहीं लगता।

– आपने एक घटना सुनायी थी, वे दो साधु जो कुटिया में थे। एक बीमार पड़ा है। दूसरा चला जा रहा है।

महाराज – दो नहीं, एक दल था। दल में किसी एक को कॉलरा हुआ है। बीमार यानि कॉलरा-टलरा आदि कुछ हुआ है। तब सारा दल भाग गया। क्योंकि विक्षेप होता है,

यही कहकर भाग गये।

– स्वामीजी ने कनखल आश्रम की स्थापना तो साधु-सेवा के लिये ही की थी।

महाराज – हाँ, कनखल आश्रम पहले साधु-सेवा के लिए ही प्रारम्भ किया गया था। उसके बाद वह केवल साधुओं के लिये ही नहीं रहा।

– उस समय की कोई घटना आपको याद है?

महाराज – अभी कोई घटना याद नहीं है, लेकिन जानता था। हमारे साधुओं को क्षेत्र में भिक्षा नहीं देते थे। हमलोगों को ये सब 'भंगी साधू' कहते थे। उस समय साधु-समाज में स्वीकृति नहीं थी। किन्तु अभी बहुत स्वीकृति हुई है। भंडारा में महन्त के स्थान पर हमलोगों के साधुओं को बैठाते हैं, इस प्रकार स्वीकृति हुई है। किन्तु इससे हमलोगों का भाव उन्होंने कितना ग्रहण किया है, यह मैं नहीं जानता। लेकिन हमलोगों के द्वारा वे लोग लाभान्वित हुए हैं। यह भी एक कारण है। इसके अतिरिक्त थोड़ा भाव-परिवर्तन भी हुआ है। वे लोग बहुत सक्रिय हैं, ऐसा नहीं लगता। उनलोगों के पास बहुत रुपया है, किन्तु उस रुपये का सदुपयोग इस प्रकार नहीं करते। साधुओं को भण्डारा देते हैं। दरिद्र-सेवा अभी भी उनलोगों में आरम्भ नहीं हुई।

– यह हुआ आध्यात्मिक जगत में रामकृष्ण मिशन का प्रभाव। सांस्कृतिक जगत में क्या प्रभाव पड़ा?

महाराज – सांस्कृतिक जगत में हमलोगों का प्रभाव गौण रूप से है। किन्तु पुस्तक का प्रचार बहुत हुआ है। बहुत-सी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। लोग पढ़ रहे हैं। पढ़कर लोगों की धारणा हो रही है कि यही एक आदर्श है, इसको अधिक प्रसारित करने की आवश्यकता है। इसीलिए हमलोगों को रुपये-पैसे बहुत आ रहे हैं। किन्तु लोग आगे बढ़कर सेवा करेंगे, ऐसा भाव बहुत कम है।

– हाँ। अन्य उपनिषद आदि ग्रन्थ हैं और विभिन्न भाषाओं में उनके अनुवाद भी हैं, जो पहले बहुत कम थे।

महाराज – हाँ। इन सबमें बहुत वृद्धि हुई है। जैसा मैंने कहा प्रचार, उसमें ये सब निहित है।

– यह जो ठाकुर, श्रीमाँ और स्वामीजी की विभिन्न प्रकार की शतवार्षिकी मनाई जा रही है, उसके बाद विभिन्न सम्मेलन हो रहे हैं, इन सब उत्सवों के सम्बन्ध में आपकी क्या धारणा है? इन सब उत्सवों से क्या कोई लोकहित का कार्य हो रहा है?

महाराज – लोकहित तो हो ही रहा है। किन्तु अभी जो उत्सव हो रहे हैं, वे बहुत व्यय-साध्य हैं। **(क्रमशः)**

संसार ऐसा ही है

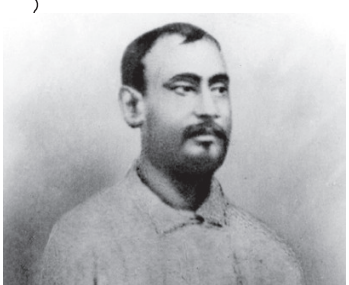

स्वामी योगानन्द (१८६१-१८९९)

स्वामी योगानन्द (योगीन महाराज) ने स्वेच्छापूर्वक या परेच्छापूर्वक विवाह के बन्धन में पड़कर एक बड़ा उत्तरदायित्व स्वीकार किया था। पुत्र को घर-गृहस्थी के प्रति उदासीन देखकर उनकी माँ ने बहुत अप्रसन्न होकर उनको डाँटते हुए कहा, ''यदि परिवार के पालन-पोषण के लिए उद्यम नहीं करना था, तो फिर विवाह ही क्यों किया?''

उत्तर में योगीन ने कहा कि मैंने तो उसी समय तुमलोगों से बारम्बार कहा था कि मैं विवाह नहीं करूँगा, मेरी विवाह करने की इच्छा नहीं है ! लेकिन तुम्हारा रोना सहन न कर सकने के कारण ही तो अन्त में विवश होकर मैं विवाह के लिए सहमत हुआ था।''

इस पर क्रोधित होकर उपहास करती हुई उनकी माँ ने कहा, ''वाह ! वाह ! यह भी कोई बात हुई ! अपने अन्दर इच्छा नहीं रहने पर भी तूने केवल मेरे लिए ही विवाह किया है ! ऐसा भी कभी सम्भव हो सकता है?''

माँ की बात सुनकर योगीन तो विस्मित हो गये। कुछ समझ में ही नहीं आ रहा था कि यह क्या हुआ ! विचार करने लगे, ''हे भगवान ! जिसके (अपनी माँ) कष्ट को देख न सकने के कारण तुम्हें छोड़ने तक को तैयार हो गया, उसी के मुँह से ऐसी बात ! इस संसार में मन और मुख का मेल केवल ठाकुर के अतिरिक्त और किसी में नहीं है। कहावत है – जिसके लिए चोरी करूँ, वही कहे चोर।'' ○○○

होली विशेष

होली : सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक परम्परा

योगेशचन्द्र शर्मा, राजस्थान

होली के सन्दर्भ में यह पौराणिक कथा प्रसिद्ध है कि नास्तिक राजा हिरण्यकशिपु का पुत्र प्रह्लाद अत्यधिक ईश्वर भक्त और आस्तिक था। उसने अपने इस पुत्र की हत्या करने के लिये अनेक प्रयत्न किये, किन्तु सफल नहीं हो सका। हारकर हिरण्यकशिपु ने यह कार्य अपनी बहन होलिका को सौंप दिया। होलिका को यह वरदान प्राप्त था कि वह अग्नि में नहीं जल सकती, इसलिए उसने प्रह्लाद को अपने साथ लिया और जलती चिता में प्रवेश कर गयी। 'अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितम्' की मान्य विचारधारा के अनुसार इस अग्निचिता में प्रह्लाद तो बच गया, लेकिन होलिका जल गयी।

होलिका और भक्त प्रह्लाद

एक दूसरी कथा के अनुसार होलिका वैदिक धर्म की कट्टर विरोधी एक राक्षसी थी। वह आर्य जनता पर अत्याचार करती और उसे विभिन्न प्रकार की पीड़ा पहुँचाती रहती थी। अन्त में एक दिन कुछ व्यक्तियों ने मिलकर उसे अग्नि को भेंट चढ़ा दिया और तब से होलिका दहन का उत्सव मनाया जाता रहा है।

तीसरी मान्यता यह भी है कि होलिका उस पूतना राक्षसी का नाम था, जिसे कंस ने कृष्ण की हत्या के लिए भेजा था और जो अन्त में स्वयं ही कृष्ण के हाथों मारी गयी थी।

इन कथाओं में कौन-सी सत्य है और कितनी सत्य है, कहना कठिन है। आज के बुद्धिवादी युग में यह प्राय: कहा जाता है कि पौराणिक कथाओं में सत्य कम और कल्पना अधिक है। फिर भी सामान्यत: यह स्वीकार किया जाता है कि होलिका दहन के पीछे मुख्य भावना असत्य पर सत्य की विजय है।

एक प्रतीक त्यौहार

होली का त्यौहार दो दिन में सम्पन्न होता है। पहला दिन फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा का होता है। इसी रात्रि को होलिका-दहन होता है। भारतीय ज्योतिष के अनुसार यह वर्ष का अन्तिम दिन है। इसलिए एक विचारधारा यह भी है कि पिछले वर्ष की समाप्ति के प्रतीक के रूप में ही होलिका दहन होता है। इस मत के अनुसार 'होलिका' और कुछ नहीं केवल बीते वर्ष का प्रतीक मात्र है। फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा का अगला दिन होली के त्यौहार का दूसरा दिन होता है। यह चैत्र प्रतिपदा का दिन होता है। इस दिन लोग रंग और अबीर से आपस में खेलते हैं। पूरे वातावरण में अजीब-सी मस्ती दृष्टिगत होने लगती है। इस समय तक सर्दी प्रस्थान कर चुकी होती है, वसन्त का प्रवेश होने लगता है। इसलिए कभी-कभी होली के इस दूसरे दिन को वसन्तोत्सव कहकर भी पुकारा जाता है।

होलिका के समय चैत्र की फसल कटकर घर आ चुकी होती है तथा जौ, गेहूँ, चना आदि मनुष्यों के उपयोग के लिये तैयार हो जाते हैं। भारतीय मान्यता के अनुसार नये अन्न का उपयोग करने से पहले उसे अग्निदेव को अर्पित करना आवश्यक है। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार 'तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव स:' (३/१२), अर्थात् देवताओं द्वारा प्रदत्त वस्तु को उनका भाग उन्हें न देकर जो स्वयं उसका उपभोग करता है, वह वास्तव में चोर है। अत: अनेक स्थानों पर यह परम्परा है कि नये अनाज की बालियों को होली की अग्नि में भूनकर प्रसाद-रूप में ग्रहण किया जाता है। भुनी हुई इन बालियों को 'होला' शब्द से ही इस त्यौहार का नाम होली पड़ा है।

वैदिक काल

वैदिक काल में यह त्यौहार यज्ञोत्सव मात्र था। उन दिनों हमारे यहाँ सामान्य यज्ञ तो नित्यप्रति ही किये जाते थे, लेकिन विशेष अवसरों पर विराट यज्ञ भी आयोजित किये जाते थे, जिनमें उस गाँव या नगर के सभी नर-नारी सम्मिलित हुआ करते थे। इन विराट यज्ञों में ही होलिकोत्सव

पर किया जानेवाला यज्ञ भी शामिल था। इसे 'नवशस्येष्टि पर्व' भी कहते थे। इस यज्ञ में नया अन्न देवताओं को भेंट में चढ़ाया जाता था। कृषि-प्रधान देश होने के कारण हमारे यहाँ इस यज्ञ का विशेष महत्त्व था। कुछ विद्वानों का विचार है कि होलिका दहन के समय बीच में जो बड़ा डंडा गाड़ा जाता है और जिसे कहीं पर प्रह्लाद का प्रतीक और कहीं पर होलिका का प्रतीक माना जाता है, वह वास्तव में प्राचीन यज्ञस्तम्भ का प्रतीक है।

जातीय समानता का त्यौहार

होलिकोत्सव वर्णव्यवस्था से ऊपर उठकर जातीय समानता का भी एक आदर्श त्यौहार है। शास्त्रों में होली-दहन की जो विधि बतलायी गयी है, उसके अनुसार अग्नि सूतिक-गृह या किसी चांडाल के यहाँ से लायी जाती है। अगले दिन चैत्र प्रतिपदा की सुबह किसी चांडाल का स्पर्श करना शास्त्रों में अत्यन्त शुभ माना गया है। यह उल्लेखनीय है कि भारतीय ज्योतिष के अनुसार विधाता ने सृष्टि के निर्माण का कार्य चैत्र प्रतिपदा को ही प्रारम्भ किया था और यहीं से नया वर्ष प्रारम्भ होता है। ऐसी स्थिति में नव-वर्षारम्भ के समय अछूत के स्पर्श को महत्त्व देना, समानता की भावना का उज्ज्वल आदर्श है।

दमित वासनाओं की अभिव्यक्ति

होलिका के दाह-संस्कार के समय प्रेत-नृत्य और अपशब्दों का प्रयोग करने की भी खुली व्यवस्था 'भविष्यपुराण' में दी हुई है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में होली के जो गीत गाये जाते हैं, उनमें भी अश्लीलता रहती है। कुछ स्थानों पर रंगों के स्थान पर कीचड़ या तारकोल-जैसे पदार्थ भी एक-दूसरे पर फेंके जाते हैं। पौराणिक मान्यता के अनुसार यह सब पिशाच-क्रीड़ा है। इस दिन सिन्दूर, कुमकुम, होली-दाह की भस्म तथा मिट्टी को अपने शरीर पर लगाकर अपने गाँव में या गली-मुहल्ले में उछलकूद करके घूमने की भी स्पष्ट व्यवस्था है। ऐसी मान्यता है कि ऐसे कार्यकलापों से ढूंढा नाम की राक्षसी तृप्त होती है। वास्तव में यह राक्षसी और कोई नहीं, हमारी अपनी उद्दाम वासना और राक्षसी भावनाओं का प्रतीक है। यहीं पर होलिकोत्सव का मनोवैज्ञानिक स्वरूप हमारे सामने उभर आता है। वर्ष भर हम अपनी उद्दंड भावनाओं पर नियन्त्रण किये रहते हैं। फ्रायड ने इन भावनाओं को 'दमित वासना' कहा है। हमारे नियन्त्रण के बावजूद ये भावनाएँ समाप्त नहीं हो पातीं। अवसर मिलने पर ये भावनाएँ या तो अपराध के रूप में प्रकट हो जाती हैं या हमारी शुद्ध भावनाओं को भी विकृत करने का प्रयत्न करती हैं। फलस्वरूप इस 'दमित वासना' को शब्दों द्वारा अभिव्यक्त करने के लिये 'होलिकोत्सव' का दिन ही निर्धारित किया गया है। इस समय अपने इन कार्य-कलापों से हम एक ओर तो अपनी इन भावनाओं और कुंठाओं से मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं और दूसरी ओर अगले वर्ष के लिए हमारी चेतना पूर्णत: मुक्त और हलकी हो जाती है।

दमित वासना की इस अभिव्यक्ति में दो बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। प्रथम, यह अभिव्यक्ति केवल शाब्दिक है और इसी रूप में इसे स्वीकृत किया गया है, इसलिए अनुचित शारीरिक हरकतें निंदनीय हैं। द्वितीय, यह अभिव्यक्ति मानव समूह और क्षेत्र के केवल उस सीमित दायरे में की जा सकती है, जो स्वयं भी इसी प्रकार की अभिव्यक्ति के लिए उत्सुक हो।

सामान्यत: तो यह उत्सव प्रेम, मधुर-मिलन और राष्ट्रीय एकता का है। इस दिन अधिकांश स्थानों पर हमें हास-विलास की ही बौछार होती हुई दृष्टिगोचर होती है। आजकल अनेक स्थानों पर 'महामूर्ख सम्मेलन' आयोजित किये जाते हैं। इनमें किसी अत्यन्त प्रतिष्ठित व्यक्ति को ही 'महामूर्ख' की उपाधि दी जाती है और वह उसे गर्वपूर्वक स्वीकार करता है।

इस दिन कोई किसी का शत्रु नहीं, कोई छोटा या बड़ा नहीं और कहीं किसी प्रकार का मनोमालिन्य नहीं। यही मूलत: होली का सांस्कृतिक स्वरूप है। ○○○

श्रीरामकृष्ण-गीता (२०)

स्वामी पूर्णानन्द, बेलूड़ मठ

(स्वामी पूर्णानन्द जी रामकृष्ण संघ के वरिष्ठ संन्यासी हैं। उन्होंने २९ वर्ष पूर्व में इस पावन श्रीरामकृष्ण-गीता ग्रन्थ का शुभारम्भ किया था। इसे सुनकर रामकृष्ण संघ के पूज्य वरिष्ठ संन्यासियों ने इसकी प्रशंसा की है। विवेक-ज्योति के पाठकों के लिए बंगला भाषा से इसका हिन्दी अनुवाद रामकृष्ण मिशन आश्रम, नारायणपुर के स्वामी कृष्णामृतानन्द जी ने की है। – सं.)

जीवावस्थाभेदः

श्रीरामकृष्ण उवाच

काचित्तु धीवरी बाला सद्यो निशीथ आगते ।
परिव्याप्तेऽपि चाकाशे झञ्झया जलदेन च ।।१६।।
पथि वम्भ्रम्यमाना सा कस्यचिन्मालिनो गृहे ।
सहसैव समागत्य सदा जग्राह हाश्रयम् ।।१७।।

– रास्ते से जाते-जाते अचानक रात हो जाने पर एवं आकाश में तूफान और बादल छा जाने पर एक मछली बेचने वाली कोई एक माली के घर पर वह अचानक ही पहुँचकर आश्रय ग्रहण करती है ।। १६-१७।।

मालाकारो यथासाध्यं तां कुसुमामगृहाङ्गने ।
दत्त्वाश्रयं सिषेवे स यत्नेन ह्यपि सत्कृताम् ।।१८।।

– माली ने फूल-घर के बरामदे में उन्हें आश्रय देकर यथासाध्य यत्न के साथ आदर-सत्कार कर सेवा किया।।१८।।

तथापि सा तु नाशक्नोन्निद्रां गन्तुं मनागपि।
यापितेव च कष्टेन वीतनिद्रा विभावरी ।।१९।।

– फिर भी वह (मछली बेचनेवाली) थोड़ी नींद नहीं पा सकी और उसकी सारी रात अनिद्रा से बड़े कष्ट में बीती ।।१९।।

फुल्ल कुसुमसम्भारा निकुञ्जे विविधास्तथा ।
तां निद्रां पुष्पगन्धोऽयं ननाश नितरामपि ।।२०।।
अंततः सावगम्यैतन्निक्षिप्य मत्सपेटके ।
किञ्चिन्नीरं तदाऽस्वाप्सीत् तं नीत्वा निकषा शिरः।।२१।।

– अन्त में यह समझकर कि वहाँ बगीचे में नाना प्रकार के फूल खिले हुए है यह फूलों के सुगंध ने ही उसकी नींद खराब कर दी तब वह महिला मछली के पेटी में सामान्य पानी छिड़काव कर उसे अपने सिर के पास लेकर सो गई ।।२०-२१।।

तथैव बद्धजीवेभ्यो विषयिभ्यो न रोचते ।
धीवर्या इस संसारे पूतिगन्धाद्धि किञ्चन ।।२२।।

– उसी प्रकार विषयी बद्धजीव को भी मछली बेचने वाली की तरह संसार में दुर्गन्धयुक्त को छोड़ अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता ।।२२।।

यद्वत् कलायशस्याद्यैराकण्ठं पूरितं गलम् ।।
कपोतशावकानामं स्यात्विज्ञातं स्पर्शनेन हि ।।२३।।

– कबूतर के बच्चों के गले में स्पर्श करने पर ही जैसे मटर आदि शस्य द्वारा आकण्ठ पूरा भरा हुआ है जान पड़ता है ।।२३।।

बद्धाश्च बोधगम्यन्ते तैः सहालापनात् तथा ।।
आकण्ठं परिपूर्णान्ते विषयवासनादिना ।।२४।।

– उसी प्रकार बद्ध जीव के साथ बात करने पर समझ में आता है विषय-वासनादि द्वारा उनके आकण्ठ परिपूर्ण है ।।२४।।

विषयालापिनस्ते हि विषयेषु सदा रताः।।
विषयो रोचते तेभ्यो धर्मकथा न रोचते ।।२५।।

– वे लोग सब समय विषय की ही बातें करते हैं, विषय में ही रत रहते हैं, विषय ही उन लोगों को अच्छा लगता है, धर्म की बातें अच्छी नहीं लगती ।

यथोद्गारेण वै ज्ञातं मूलकं येन भक्षितम् ।।
ज्ञायते धार्मिकः सद्यस्तेनैवालापनेन हि ।।२६।।
स धर्मालापनं तद्वत कुरुते यस्तु धार्मिकः।।
ततो विषयमाचष्टे केवलं विषयी तु यः ।।२७।।

– जिन्होंने मूली खायी है, उनके डकार लेने से ही समझ में आ जाता है, उसी प्रकार जो धार्मिक है, उससे बातें करने पर उसी क्षण समझ में आ जाता है कि यह धार्मिक है, यह केवल धर्म प्रसंग ही करता है और जो व्यक्ति विषयी है, वह विषय की बातें ही बोला करता है।।२६-२७ ।। **(क्रमशः)**

काव्य-लहरी

शिव-स्वरूप हो तुम वीरेश्वर

डॉ. ओमप्रकाश वर्मा

शिव-स्वरूप हो तुम वीरेश्वर, सदा निरत तुम जनकल्यान।
दिव्य लोक से तुम आये प्रभु, सुनकर रामकृष्ण-आह्वान ।।
ज्योतिपुंज तुम सत्यनिष्ठ हो, धर्म-तत्त्व के तुम आख्यान ।
आत्मज्ञान का अलख जगाने, आये हो तुम हे भगवान ।।
परम तत्त्व में सदा लीन तुम, देते ज्ञान-भक्ति का दान ।
घनीभूत आनन्दभाव हो, विश्वजनों के तुम अभिमान ।।
करुणाविगलित हृदयवान तुम, कर्मयोगि यतिश्रेष्ठ महान ।
नित्य प्रणति है मेरा तुमको, वीर विवेकानन्द महान ।।

सुख-दुख

सदाराम सिन्हा 'स्नेही'

दुख है मानव जीवन का आधार ।
सुख बरसाती नदी सदृश बहती जल की धार ।।
सुख आते जीवन में, दुख विपदा हर देते हैं ।
दुख स्याह रजनी बनकर सबको कष्ट देते हैं ।।
सुख-दुख का समय चक्र जैसे मौसमी बहार ।।१।।
विहंग मेहनत कर अपना नीड़ बना लेते हैं ।
विजय पाने पथिक समय पर दस्तक देते हैं ।।
दुख लड़ने को देते साहस शौर्य उर्जा अपार ।।२।।
पथ कठिन है चक्रव्यूह से बाहर निकलने का ।
प्रयास से गुर सीख जाते, हल निकालने का ।।
कष्ट सिखाता जीवन में पाने न्याय अधिकार ।।३।।
संघर्षी मनुज ! जीवन जीना सीख जाते हैं ।
बल बुद्धिमानी दूर अम्बर से लौट आते हैं ।।
जो भीरू कष्ट से डरते समर में जाते हार ।।४।।
कुन्ती ने कृष्ण से दुख माँगकर रचा इतिहास ।
कौरवों ने सुख की चाह में किया कुल का नाश ।।
दुख देनेवालों को मिलता काँटों का उपहार ।।५।।
सुख अमावस की चाँद घटता जाता क्रमवार ।
दुख साहस की लहरें हिम्मत देती बार-बार ।।
चिन्तन से परे है, सुख-दुख का रचना संसार ।।६।।

जय रामकृष्ण नरदेव हरे

(तर्ज - जय राम रमारमनं ...)

रामकुमार गौड़, वाराणसी

जय रामकृष्ण नरदेव हरे ।
जय प्रभुवर चिद्घनकाय धरे ।।
छविरूप अनूप सुशान्तिप्रदं ।
शुभ दरश अमोघ परम सुखदम् ।।१।।
प्रभु संग सुशोभित जगजननी ।
सारदा भक्तमति मलहरनी ।
अति विमल विवेक-निधिं अभयं।
प्रभु शिष्य नरेन्द्र विकारजयम् ।।२।।
प्रभु तन्मय सहज समाधि-सुखे ।
मृद मन्द सुहास विराज मुखे ।
लोचन छवि अकथ अनूप सदा।
तन्मय छविरूप कृपा-वरदा।।३।।
प्रभु सुख-आसन-प्रिय, विगतभयं।
आजानुकरं संलग्न द्वयम् ।
मुखमण्डल सौम्य विशेषकरं ।
दिव्यताधाम अघ-क्लेशहरम् ।।४।।
कीर्तने ईश-गुणगान-रतं ।
प्रभु सत्वर सहज समाधिगतम्।
परिवेष्टित भक्तजनैः स्वयं ।
निरहंकृत-दिव्य स्वरूपमयम्।।५।।
श्रीअंग बाह्यरहितं सकलं ।
निस्पन्द विदेह छवि विमलम् ।
भव-ताप-भयाकुल दास अथं ।
प्रभु ! देहि भक्ति पद कमल द्वयम् ।।६।।

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस विशेष

भारत की पहली महिला गवर्नर

श्रीमती मिताली सिंह, बिलासपुर

बच्चों आज हम ऐसे स्वतंत्रता सेनानी के जीवन पर प्रकाश डालेगें जिन्हें **The Nightingle of India, भारत कोकिला** और **भारत की बुलबुल** के नाम से जाना जाता है। उनको भारत कोकिला इसीलिए कहा जाता था कि वे विशेषकर बच्चों के लिए लिखती थीं और लोग उनकी रचनाओं का गायन करते थे।

बदलता हूँ
मैं सोच भी बदलता हूँ,
मैं नजरिया भी बदलता हूँ
मिले ना मंजिल मुझे,
तो मैं उसे पाने का जरिया भी बदलता हूँ
बदलता नहीं अगर कुछ,
तो मैं लक्ष्य नहीं बदलता हूँ,
उसे पाने का पक्ष नहीं बदलता हूँ।

उनकी एक बहुत प्रसिद्ध कविता हुई, बच्चों आशा करती हूँ कि आप सभी इनका नाम समझ गये होंगे। इनका नाम है 'सरोजिनी नायडू' इनका पूरा नाम था सरोजिनी नायडू चट्टोपाध्याय। इनका जन्म १३ फरवरी, १८७९ हैदराबाद में हुआ था। इनके जन्म दिवस को राष्ट्रीय महिला दिवस 'National Women's Day' के रूप में भी मनाया जाता है।

इनके पिता का नाम था डॉ. अघोरनाथ चट्टोपाध्याय और माता का नाम था बरदा सुन्दरी देवी चट्टोपाध्याय। सरोजिनी का विवाह गोविन्द राजुलु नायडू से हुआ था। इनके बच्चों के नाम थे – जयसूर्य, पद्मजा, नीलावर, लीलामणि और रणधीरा। सरोजिनी का जन्म एक बंगाली परिवार में हुआ था। उनके पिताजी एक वैज्ञानिक एवं डॉक्टर थे, जो हैदराबाद में रहते थे। सरोजिनी बचपन से ही बहुत अच्छी विद्यार्थी थीं। उन्हें उर्दू, तेलुगू, हिन्दी, अंग्रेजी और बंगाली भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। १२ साल की उम्र में सरोजिनी ने मद्रास यूनिवर्सिटी से मैट्रिक की परीक्षा में टॉप किया था। सरोजिनी के पिता चाहते थे कि वह वैज्ञानिक बने या गणित में आगे पढ़ाई करे। लेकिन उनकी रुचि कविता लिखने और पढ़ने में थी। सरोजिनी को कविता लिखने की प्रेरणा उनकी माँ से मिली थी।

एक दिन सरोजिनी अपने गणित के पुस्तक में १३०० पंक्तियों की कविता लिखी। यह देखकर उसके पिताजी आश्चर्यचकित हुए तथा वे उसकी कॉपी करके बहुत जगह वितरित किये। वे उसे हैदराबाद के नवाब को भी दिखाते हैं, जिसे देखकर वे बहुत आनन्दित हुए और सरोजिनी को विदेश में अध्ययन करने के लिए स्कॉलरशीप भी दिया।

सरोजिनी अपनी आगे की पढ़ाई के लिये लन्दन चली गई और वहाँ किंग्स कॉलेज में पढ़ाई आरम्भ किया। सरोजिनी ने शादी के बाद भी अपना लिखना जारी रखा, वे बहुत सुन्दर-सुन्दर कवितायें लिखती थीं, जिन्हें लोग गाने के रूप में भी गाते थे। १९०५ में उनकी कविता 'बुलबुले-हिन्दी' प्रकाशित हुई, जिसके बाद से वे बहुत प्रसिद्ध हो गयीं।

इसके बाद उनकी कविताएँ प्रकाशित होने लगीं और बहुत से लोग उनके प्रशंसक बन गये। प्रशंसकों की सूची में जवाहर लाल नेहरू और रवीन्द्रनाथ टैगोर जैसे महान लोग भी थे। वे अंग्रेजी में भी अपनी कविताएँ लिखा करती थीं, लेकिन उनकी कविताओं में भारतीयता झलकती थी। एक

दिन सरोजिनी बालकृष्ण गोखले जी से मिली और उन्होंने सरोजिनी को कविताओं में क्रांतिकारी भाव लाने को कहा और सुन्दर शब्दों से स्वतंत्रता की लड़ाई में साथ देने के लिए छोटे-छोटे गाँव के लोगों को प्रोत्साहित करने को कहा।

शेष भाग पृष्ठ २०३ पर

प्रश्नोपनिषद् (३३)

श्रीशंकराचार्य

(सनातन वैदिक धर्म के ज्ञानकाण्ड को उपनिषद् कहते हैं। हजारों वर्ष पूर्व भारत में जीव-जगत् तथा उससे सम्बद्ध गम्भीर विषयों पर प्रश्न उठाकर उनकी जो मीमांसा की गयी थी, ये उन्हीं के संकलन हैं। वैदिक धर्म की पुन: स्थापना हेतु आचार्य ने इन पर सहज-सरस भाष्य लिखकर अपने सिद्धान्त को प्रतिपादित किया था। प्रश्नोपनिषद् पर लिखे उनके भाष्य का हिन्दी अनुवाद 'विवेक-ज्योति' के पूर्व-सम्पादक स्वामी विदेहात्मानन्द जी द्वारा किया गया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' के पाठकों हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है। –सं.)

भाष्य – ननु महिमा-अनुभवने करणं मनः, अनुभवितुः तत्कथं स्वातन्त्र्येण अनुभवति इति उच्यते स्वतन्त्रो हि क्षेत्रज्ञः।

भाष्यार्थ – शंका – परन्तु महिमा के अनुभव में मन करण या माध्यम है; तो फिर ऐसा कैसे कह दिया कि मन स्वाधीन भाव से अनुभव करता है? (एकमात्र) क्षेत्रज्ञ (जीवात्मा) ही तो (स्वप्न काल में) स्वाधीन होता है।

भाष्य – नैष दोषः; क्षेत्रज्ञस्य स्वातन्त्र्यस्य मन-उपाधि-कृतत्वात् न हि क्षेत्रज्ञः परमार्थतः स्वतः स्वपिति जागर्ति वा।

भाष्यार्थ – उत्तर – नहीं, यह कोई दोष नहीं है। क्षेत्रज्ञ आत्मा की जो स्वाधीनता है, उस मन की उपाधि हो जाने से, क्षेत्रज्ञ वस्तुत: स्वयं स्वप्न या जाग्रत अवस्था में नहीं होता।

भाष्य – मन-उपाधि-कृतम् एव तस्य जागरणं स्वप्नः च इति उक्तं वाजसनेयके 'सधीः स्वप्नो भूत्वा ध्यायतीव लेलायतीव' (बृहदा. ४/३/७) इत्यादि।

भाष्यार्थ – उस (आत्मा) का जागरण तथा स्वप्न मन-उपाधि से जुड़कर हुआ है, जैसा कि वाजसनेयक उपनिषद् में भी कहा गया है – ''बुद्धि या अन्त:करण के साथ संयुक्त होकर और स्वप्न के साथ तादात्म्य करके वह (आत्मा) समझता है, मानो वह सोचता-विचारता तथा चलता-फिरता है।''

भाष्य – तस्मात् मनसः विभूति-अनुभवे स्वातन्त्र्य-वचनं न्याय्यम् एव।

भाष्यार्थ – अत: विभिन्न अभिव्यक्तियों के रूप में मन की महिमा के अनुभव में उसकी स्वाधीनता बताना उचित ही है।

भाष्य – मन-उपाधि-सहितत्वे स्पप्नकाले क्षेत्रज्ञस्य स्वयंज्योतिष्ट्वं बाध्य-इति केचित्। तत् न, श्रुति-अर्थ-अपरिज्ञान-कृता-भ्रान्तिः तेषाम्।

भाष्यार्थ – कुछ लोग ऐसा भी मानते हैं कि यदि स्वप्न के समय क्षेत्रज्ञ (आत्मा) को मन-उपाधिवाला मान लें, तो उसकी स्वयं-प्रकाशता बाधित हो जाएगी। परन्तु ऐसी बात नहीं है, उनकी यह भ्रान्ति – श्रुति का अर्थ लगाने में उनकी भूल के कारण हुई है।

भाष्य – यस्मात् स्वयं-ज्योतिष्ट्व-आदि-व्यवहारः अपि आमोक्षान्तः सर्वः-अविद्या-विषय एव मन-आदि-उपाधि-जनितः। 'यत्र वा अन्यत्-इव स्यात् तत्र अन्यो-अन्यत् पश्येत्' (बृहदा. ४/३/३१), 'मात्रा-संसर्गस्त्वस्य भवति' (शतपथ ब्रा. १४/७/३/१५),'यत्र तु अस्य सर्वम्-आत्मा-एव-अभूत्-तत्-केन कं पश्येत्' (बृहदा. २/४/१४) इत्यादि-श्रुतिभ्यः। अतो मन्द-ब्रह्मविदाम् एव इयम् आशङ्का न तु एकात्म-विदाम्।

भाष्यार्थ – चूँकि स्वयं-प्रकाशता से लेकर मोक्ष तक – जितने भी व्यवहार (कार्य) हैं, वे सभी मन आदि उपाधि से उत्पन्न होनेवाले अविद्या का ही विषय हैं। श्रुतियों में है – ''जिस (जाग्रत या स्वप्न) अवस्था में आत्मा की अनुभूति होती है, तभी वह अन्य – अन्य को देखता है।'' ''उसका विषय के साथ संसर्ग नहीं होता।'' ''जिस अवस्था में उस (पुरुष) का सब कुछ आत्म-स्वरूप हो गया है, उस अवस्था में कौन किसके माध्यम से देखेगा?'' अत: अद्वितीय आत्मा की अनुभूति करनेवालों की नहीं, अपितु अल्पबुद्धि वाले ब्रह्मवेत्ताओं में ही यह आशंका होती है।

भाष्य – ननु एवं सति 'अत्रायं पुरुषः स्वयंज्योतिः' (बृहदा. ४/३/१४) इति विशेषणम् अनर्थकं भवति।

शेष भाग पृष्ठ १९८ पर

विनोदप्रिय श्रीरामकृष्ण

डॉ. अवधेश प्रधान

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

(गतांक से आगे)

तीर्थ यात्रा का प्रसंग चलने पर एक दिन श्रीरामकृष्ण ने कहा – जब तक यह बोध है कि ईश्वर वहाँ है, वहाँ है, तब तक अज्ञान है। जब 'यहाँ है' – यह बोध हो जाता है, तब ज्ञान। फिर एक कहानी सुनाई – एक आदमी को रात को तंबाकू पीने की इच्छा हुई। वह टिकिया सुलगाने के लिये पड़ोसी के घर गया। सब लोग सो गए थे। बड़ी देर तक दरवाजा खटखटाने के बाद एक आदमी निकला, पूछा – क्या है? उसने बताया – टिकिया सुलगानी है। घर वाले ने कहा – अजी वाह, तुम तो बड़े भलेमानुस निकले, इतनी मेहनत करके आये और दरवाजा खटखटाया, तुम्हारे हाथ में लालटेन जो है! (सब हँसते हैं) (वही, पृ.४८९)

श्रीरामकृष्ण ने ब्राह्म समाज के एक प्रमुख नेता प्रतापचन्द्र मजूमदार से कहा – देखो, तुम्हारे ब्राह्म समाज का लेक्चर सुनकर आदमी का भाव आसानी से ताड़ लिया जाता है। मुझे एक हरिसभा में ले गए थे। आचार्य थे एक पंडित, नाम सामाध्यायी था। कहा, ईश्वर नीरस हैं, हमें अपने प्रेम और भक्ति से उन्हें सरस कर लेना चाहिए। यह बात सुनकर मैं तो दंग रह गया। तब एक कहानी याद आ गई। एक लड़के ने कहा था, मेरे मामा के यहाँ बहुत-से घोड़े हैं – गोशाले भर। अब सोचो, अगर गोशाला है, तो वहाँ गौओं का ही रहना सम्भव है, घोड़ों का नहीं। इस तरह की असंबद्ध बातें सुनकर आदमी क्या सोचता है? यही कि घोड़े-सोड़े कुछ नहीं है। (सब हँसते हैं।)

एक भक्त – घोड़े तो हैं ही नहीं, गौएँ भी नहीं हैं। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण – देखो न, जो रसस्वरूप हैं, उन्हें कहता है - 'नीरस'। इससे यही समझ में आता है कि ईश्वर क्या चीज है, उसने कभी अनुभव भी नहीं किया! (वही, पृ.५२२)

पुराने संस्कार एकाएक नहीं छूटते, यह बात समझाने के लिए श्रीरामकृष्ण ने एक कहानी सुनाई – एक जगदम्बा के भक्त को जबरन मुसलमान बना दिया गया और उसे अल्ला मंत्र का जप करते रहने को कहा। वह बेचारा मन मारकर अल्ला-अल्ला जपता था, लेकिन कभी-कभी उसके मुँह से जगदम्बा का नाम निकल पड़ता था। तब मुसलमान उसे मारने दौड़ते। तब वह कहता था – दोहाई शेख जी, मुझे मारना नहीं। मैं अल्ला का नाम लेने की बड़ी चेष्टा करता हूँ, लेकिन क्या करूँ, भीतर जगदम्बा समाई हुई हैं, तुम्हारे अल्ला को धक्के मारकर निकाल देती हैं। (सब हँसते हैं) (वही, पृ.५५९)

श्रीरामकृष्ण ने कहा – अहंकार के गए बिना ईश्वर भार नहीं लेते। फिर इस पर कहानी सुनाई – बैकुंठ में श्रीलक्ष्मीजी और नारायण बैठे हुए थे। एकाएक नारायण उठकर खड़े हो गए। श्रीलक्ष्मी ने पूछा – कहाँ चले? नारायण बोले – एक भक्त विपत्ति में पड़ गया है, उसकी रक्षा करने जा रहा हूँ। थोड़ी ही देर बाद नारायण लौट आये। लक्ष्मीजी ने पूछा – इतनी जल्दी कैसे आ गए? नारायण ने हँसकर कहा – प्रेम विह्वल भक्त रास्ते से चला जा रहा था। रास्ते में धोबियों ने सूखने के लिए कपड़े फैलाए थे। भक्त उन कपड़ों के ऊपर से चला जा रहा था। धोबी लाठी लेकर उसे मारने चले। इसीलिए मैं उसे बचाने के लिए दौड़ा-दौड़ा गया। लेकिन जाकर देखा, उस भक्त ने धोबियों को मारने के लिये स्वयं ही पत्थर उठा लिया। (सब हँसते हैं) इसीलिए मैं फिर नहीं गया। (वही, पृ.९४६-४७)

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का दर्शन और सत्संग करने आनेवाले कलकत्ते के अनेक भक्त प्राय: उच्च शिक्षित थे, जो यदा-कदा अंग्रेजी में बातचीत करते थे। उनकी बातचीत सुनते-सुनते कुछ शब्द उन्हें याद भी हो गए थे, जैसे – थैंक यू ! भक्तों की कोई बात पसन्द आती, तो वे कहते – थैंक यू ! श्रीरामकृष्ण ने कहा – सच्चे वैष्णव शक्ति की निन्दा नहीं करते। इस पर महेन्द्र गोस्वामी ने कहा – शिव-पार्वती हमारे माता-पिता हैं ! श्रीरामकृष्ण ने प्रसन्न होकर हँसते हुए कहा

– थैंक यू ! माता-पिता हैं। (वही, पृ.४१७) नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) ने हैमिल्टन का एक वाक्य अंग्रेजी में दुहराया और फिर पूछने पर उसका अर्थ बताया – 'दर्शनशास्त्रों का पठन समाप्त होने पर मनुष्य पण्डित-मूर्ख बन जाता है और धर्म-धर्म करने लगता है ! तब धर्म का आरम्भ होता है।'' श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए समर्थन किया – थैंक यू ! थैंक यू! सब लोग हँसने लगे। (वही, पृ.२८५)

अधर सेन के बंकिम आदि मित्र धीरे-धीरे अंग्रेजी में बात कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण को एक कहानी याद आने से हँसी आने लगी। कहानी यह है – नाई हजामत बनाने गया था। एक सज्जन हजामत बनवा रहे थे। अब हजामत बनवाते-बनवाते उन्हें जरा कहीं अस्तुरा लग गया और उस सज्जन ने कहा – डैम। परन्तु नाई तो डैम का मतलब नहीं जानता था। जाड़े का दिन था, उसने अस्तुरा आदि छोड़-छाड़कर अपनी कमीज की आस्तीन उठाकर कहा, ''तुमने मुझे डैम कहा, अब कहो, इसका मतलब क्या है?'' उस व्यक्ति ने कहा, 'अरे, तू हजामत बना न! उसका मतलब कुछ विशेष नहीं है, परन्तु जरा होशियारी से बनाना!'' नाई भी छोड़नेवाला न था। वह कहने लगा, ''डैम का अर्थ यदि अच्छा है, तो मैं डैम, मेरा बाप डैम, मेरे चौदह पुरुष डैम हैं ! (सभी हँसे) और डैम का अर्थ यदि खराब हो, तो तुम डैम, तुम्हारा बाप डैम, तुम्हारे चौदह पुरुष डैम हैं।'' (सभी हँसे) फिर केवल डैम ही नहीं – डैम, डैम, डैम, डैम।'' (सभी जोर से हँसे)। (वही, पृ.७८५)

श्रीरामकृष्ण की विनोदलीला का एक आयाम वह है, जिसमें वह पाखंड के विभिन्न रूपों पर व्यंग्य करते हैं। जब बंकिम ने उन्हें अपने घर पर आमंत्रित किया और कहा कि वहाँ पर भी भक्त हैं, तो ठाकुर ने हँसते हुए पूछा – कैसे भक्त हैं, वहाँ पर? जिन्होंने गोपाल-गोपाल, केशव, केशव कहा था, उनकी तरह के हैं क्या? फिर उन्होंने हँसते हुए गोपाल-गोपाल की कहानी सुनाई – एक स्थान पर एक सुनार की दुकान है। वे लोग परम वैष्णव हैं, गले में माला, तिलक है। हमेशा हाथ में हरिनाम का झोला और मुख में सदैव हरिनाम। उन्हें कोई भी साधु ही कहेगा और सोचेगा कि वे पेट के लिए ही सुनार का काम करते हैं क्योंकि औरत-बच्चों को पालना ही है। परम वैष्णव जानकर अनेक ग्राहक उन्हीं की दुकान में आते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि इनकी दुकान में सोने-चाँदी में गड़बड़ी न होगी। ग्राहक दुकान में आते ही देखता है कि वे मुख से हरिनाम जप रहे हैं और बैठे हुए काम-काज भी कर रहे हैं? खरीददार ज्योंही जाकर बैठा कि एक आदमी बोल उठा, 'केशव! केशव! केशव!' थोड़ी देर बाद एक दूसरा कह उठा, 'गोपाल! गोपाल! गोपाल!' फिर थोड़ी देर बातचीत होने पर एक तीसरा व्यक्ति कह उठा, 'हरि ! हरि ! हरि'। अब जेवर बनाने की बातचीत एक प्रकार से समाप्त हो रही है। इतने में ही एक व्यक्ति बोल उठा, 'हर हर हर'। इसीलिये तो इतनी भक्ति-प्रेम देखकर वे लोग इन सुनारों के पास अपना रुपया-पैसा देकर निश्चिन्त हो जाते हैं। सोचा कि वे लोग कभी नहीं ठगेंगे। परन्तु असली बात क्या है, जानते हो? ग्राहक के आने के बाद जिसने कहा था, केशव-केशव, उसका मतलब है – ये लोग कौन हैं? अर्थात् ये ग्राहक लोग कौन हैं? जिसने कहा – गोपाल, गोपाल; उसका मतलब है, ये लोग गाय के दल हैं। जिसने कहा, हरि हरि - उसका मतलब है, ये लोग मूर्ख हैं, तो फिर 'हरि' अर्थात् हरण करूँ? और जिसने कहा हर-हर, इसका मतलब है, इनका सब कुछ हरण कर लो ! ऐसे वे परम भक्त साधु थे! (सभी हँसे)। (वही, पृ.७९५)

भारतीय साहित्य में ब्राह्मण का पाखंड हमेशा से व्यंग्य का लक्ष्य रहता आया है। श्रीरामकृष्ण ने ईशान बाबू से कहा, ''मैंने देखा है, ब्राह्मण स्वस्त्ययन करने आया है। चंडीपाठ या अन्य कुछ पाठ कर रहा है, पर आधा पन्ना वैसे ही उलटता जा रहा है।'' (सभी हँस पड़े) (वही, पृ.३०७)

श्यामदास माथुर ने कीर्तन गाया, लेकिन श्रीरामकृष्ण को उनका गाना नहीं जमा। शाम को अधर सेन से उन्होंने बताया। ''उस आदमी की बात उन्हें बाद में जानकारी हुई। गोपीदास के साथ वाले ने कहा, मेरे सिर पर जितने बाल हैं, उतनी उसकी रखेलियाँ हैं।'' (सब हँसते हैं) (वही, पृ.५९७)

कोई कोई संध्योपासना कर रहे हैं या माला जप रहे हैं और इधर सांसारिक बातें भी करते रहते हैं – ''बहुतेरे तो संध्योपासना करते हुए ही दुनिया भर की बातें करते हैं। परन्तु बातचीत करने की मनाही है, इसलिये ओंठ दबाये हुए ही हर तरह का इशारा करते हैं। यह ले आओ, वह ले आओ - ऊ-हूँ-हूँ, यही सब किया करते हैं। (सब हँसते हैं)'' ''और कोई-कोई ऐसे हैं कि माला जपते हुए ही मछलीवाली से मछली का मोल-तोल करते हैं। जप करते हुए कभी उँगली से इशारा करके बतला देते हैं कि वह

मछली निकाल। जितना हिसाब है, सब उसी समय होता है।'' (सब हँसते हैं) (वही, पृ.८४८)

फिर गंगा स्नान करने आनेवाली स्त्रियों का क्या पूछना? गंगा तट पर उनकी बातचीत का नमूना ठाकुर के मुँह से सुनिये, ''स्त्रियाँ गंगा नहाने के लिये आती हैं। उस समय ईश्वर का चिन्तन करना दूर रहा, उसी समय दुनिया भर की बातें करने लग जाती हैं। पूछती हैं, 'तुम्हारे लड़के का

विवाह हुआ, तुमने कौन-कौन से गहने दिए? अमुक को कठिन बीमारी है। अमुक की बेटी अपनी ससुराल से आई या नहीं, अमुक आदमी लड़की देखने गया था, वह खूब देगा और खर्च भी खूब करेगा' 'हमारा हरीश मुझसे इतना हिला-मिला हुआ है कि मुझे छोड़कर एक क्षण भी नहीं रह सकता', 'माँ, मैं इतने दिनों तक इसीलिये नहीं आ सकी कि अमुक की लड़की के 'देखुआ' आये थे, अबकी बार विवाह पक्का होनेवाला था, इसलिये मुझे समय नहीं मिला।'- 'देखो न, कहाँ तो गंगा नहाने के लिये आई हैं और कहाँ दुनिया भर की बातें।' (वही, पृ.८४८)

श्रीरामकृष्ण ने विजयकृष्ण गोस्वामी आदि भक्तों से कहा – साधुओं के तीन प्रकार हैं – उत्तम, मध्यम और अधम। जो उत्तम हैं, वे भोजन की खोज में नहीं घूमते। मध्यम जो हैं, वे नमो नारायण करके खड़े हो जाते हैं। जो अधम हैं, वे न देने पर झगड़ा करते हैं। (सब हँसे) (वही, पृ.७७१)

धार्मिक पाखण्ड का एक रूप धार्मिक सम्प्रदायों की संकीर्णता में दिखाई देता है। इसकी आलोचना करते हुए श्रीरामकृष्ण देव ने पहले वैष्णवों की संकीर्णता का उल्लेख किया – 'भक्तमाल' में भगवती को विष्णु मंत्र दिलाया है, तब पिण्ड छोड़ा है। ...वैष्णवचरण ने देवी के उपासक मथुर बाबू से कह दिया कि हमारे केशव मत के बिना कुछ होने-जाने का नहीं। श्रीमद्भागवत में भी इसी तरह की बाते हैं। ...फिर शाक्तों की खबर ली - ''शाक्त भी वैष्णवों को छोटा सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं। श्रीकृष्ण भव-नदी के नाविक हैं, पार कर देते हैं, इस पर शाक्त लोग कहते हैं – हाँ, यह बिलकुल ठीक है, क्योंकि हमारी माँ राजराजेश्वरी हैं, भला वे कभी स्वयं आकर पार करा सकती हैं? कृष्ण को पार करने के लिये नौकर रख लिया है! (सब हँसते हैं) (वही, पृ.५६४)

एक दिन गौरी पण्डित के कट्टरपन के बारे में बताया, ''पहले-पहल कट्टर शाक्त था। तुलसी का पत्ता दो लकड़ियों के सहारे उठाता था – छूता न था।'' (सभी हँसे) (वही, पृ.३१०)

शाक्तों, वैष्णवों, वेदान्तियों के परस्पर-विद्वेष भाव की आलोचना करते हुए उन्होंने वर्धमान के सभापंडित पद्मलोचन का रोचक उदाहरण दिया। सभा में विचार हो रहा था – शिव बड़े हैं या ब्रह्मा। पद्मलोचन ने बहुत सुन्दर बात कही थी – ''मैं नहीं जानता, मुझसे न शिव का परिचय है और न ब्रह्मा का।'' (सभी हँसने लगे) (वही, पृ.२०३)

स्वार्थियों और कंजूसों पर भी ठाकुर को हँसी आती थी। स्वार्थी लोग कैसे होते हैं। ''कटी उँगली पर भी नहीं मूतते कि कहीं दूसरे का उपकार न हो जाय!'' (सब हँसे) ''एक पैसे की बर्फी ले आने को कहो, तो उसमें से भी कुछ साफ कर जाएँगे।'' (सब हँसते हैं) (वही, पृ.१०५)

एक दिन ठाकुर ने दान के प्रसंग में कहा – जिसके पास धन है, उसे दान करना चाहिए। फिर कहा – धन के रहने पर भी कोई-कोई बड़े हिसाबी होते हैं। फिर ब्राह्म समाज के जयगोपाल का उदाहरण दिया – ''अभी उस दिन जयगोपाल आया था। गाड़ी पर आया करता है। गाड़ी में फूटी लालटेन और घोड़े मरघट से लौटे हुए – दरबान मेडिकल कॉलेज के अस्पताल का वापस आया हुआ मरीज और यहाँ के लिए ले आता है दो सड़े अनार !'' (वही, पृ.४५५)

यहाँ व्यंग्य के भीतर 'कैरिकेचर' की कला है, जिसमें अतिशयोक्ति से काम लिया जाता है, जैसे कि कार्टून में; जिसकी नाक लम्बी है, उसकी नाक काफी बड़ी बनाकर दिखाते हैं। कभी-कभी ठाकुर इस कला से भी काम लेते हैं। एक दिन बताया, नाटक कम्पनी में काम करनेवालों को बड़ा कष्ट रहता है, गोल-गाल चेहरा बाद में बिगड़ जाता

है। नट प्राय: कैसे होते हैं – ''मुँह सूखा, पेट मोटा, बाँह पर ताबीज!'' (सभी हँसे) (वही, पृ.४७२)

एक दिन उन्होंने कहा – विषयी आदमियों का जी ही निकल आता है, अगर उन्हें गाँठ से पैसा खर्च करना पड़े। फिर इस पर एक कहानी सुनाई – एक जगह नाटक हो रहा था। एक आदमी को बैठकर सुनने की बड़ी इच्छा थी। उसने झाँक कर देखा, तो उसे मालूम हुआ कि यदि कोई बैठकर देखना चाहता है, तो उससे टिकट के दाम लिये जाते हैं। फिर क्या था, वहाँ से चलता बना। एक दूसरी जगह नाटक हो रहा था, वह वहाँ गया। पूछने पर मालूम हुआ, वहाँ टिकट नहीं लगता। वहाँ बड़ी भीड़ थी। वह दोनों हाथों से भीड़ हटाकर बीच महफिल में पहुँचा। वहाँ अच्छी तरह जमकर मूँछों पर ताव दे-देकर सुनने लगा। (सब हँसते हैं) (वही, पृ.८९७)

रथयात्रा के अवसर पर (जुलाई, १८८५) श्रीरामकृष्ण बलराम बसु के घर पधारे थे। उन्होंने नरेन्द्र से गाने को कहा, तो वे बोले – ''बाजा नहीं, कैसे गाऊँ'', श्रीरामकृष्ण – 'हमारी जैसी परिस्थिति है ! इसी में रहकर गा सको, तो गाओ। इस पर बलराम की व्यवस्था है !'' अब ठाकुर की व्यंग्य कला ने अपनी पंखुड़ियाँ खोलीं – ''बलराम कहता है, आप नाव पर ही कलकत्ता आया कीजिये, अगर कभी न बने, तभी गाड़ी से आया कीजिये। (सब हँसते हैं) देखते हो, आज उसने खिलाया है, इसीलिए आज तीसरे पहर भी हम सबों को कसकर नचाएगा। (हास्य) यहाँ से एक दिन उसने गाड़ी की – बारह आने में ! मैंने पूछा – क्या बारह आने में दक्षिणेश्वर तक गाड़ी जायेगी? उसने कहा – हाँ, ऐसा होता है। मार्ग में जाते-जाते गाड़ी का कुछ भाग ही अलग हो गया! (उच्च हास्य) घोड़ा भी बीच-बीच में पैर अड़ाता था। किसी तरह चलता ही न था, गाड़ीवान जब कसकर चाबुक मारता था, तब घोड़े के पैर उठते थे। इधर राम ढोल बजाएगा और हमलोग नाचेंगे। राम को ताल का भी ज्ञान नहीं है। (सब हँसे) बलराम का यह भाव है – आप लोग गाइये, बजाइए, नाचिये और आनन्द कीजिये! (सब हँसते हैं) (वही, पृ.९६४)

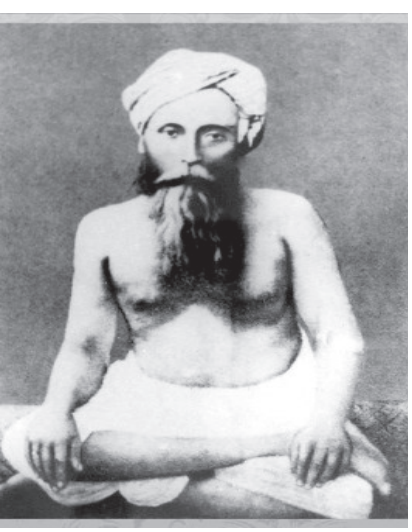
बलराम बसु

ठाकुर की व्यंग्य-कला में कहावतों की भी सहयोगी भूमिका है। गेरुआ कपड़ा पहने हुए एक बंगाली सज्जन को देखकर उन्होंने कहा – यह गेरुआ क्यों? क्या कुछ लपेट लेने ही से हो गया? (हँसते हैं) किसी ने कहा था – चंडी छोड़कर अब ढोल बजाता हूँ। पहले चण्डी के गीत गाता था। फिर ढोल बजाने लगा। (सब हँसते हैं) (वही, पृ.१६८)

२४ मई, १८८४ को 'विद्यासुंदर' नाटक में विद्या का अभिनय करनेवाले लड़के के अभिनय की प्रशंसा करने के बाद पूछने पर जब पता चला कि उसकी शादी हो गई है, एक लड़की मर गई, फिर एक सन्तान हुई है, तो श्रीरामकृष्ण ने कहा – ''इसी बीच में हुआ और मर भी गया। तुम्हारी यह कम उम्र ! कहते हैं – संध्या के समय पति मरा, कितनी रात तक रोऊँगी!'' (सभी हँस पड़े) (वही, पृ.४९१-९२)

प्रतापचन्द्र हाजरा दक्षिणेश्वर में रहकर जप आदि करते रहते हैं। हाजरा की माँ बेटे से मिलने को व्याकुल हैं। ठाकुर की इच्छा है, हाजरा कुछ दिन के लिये घर जाकर अपनी माँ से मिल आयें। वे नहीं जाना चाहते। ज्ञानी जो हैं! श्रीरामकृष्ण – संसार में जाते हुए ज्ञानी को क्या डर है? महिमाचरण (सहास्य) – महाराज, हाजरा को ज्ञान हो, तब न?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – 'हाजरा को सब कुछ हो गया है। संसार में थोड़ा-सा मन है, क्योंकि बच्चे आदि हैं और कुछ ऋण है।' अब इस पर ठाकुर कहावत जोड़ते हुए उपसंहार करते हैं – मामी की सब बीमारी अच्छी हो गई है, एक नासूर रंग है।'' (महिमाचरण आदि सब हँसते हैं) (वही, पृ.७६५)

बलराम बसु के घर में त्रैलोक्य ने श्रीरामकृष्ण देव को कई गाने गाकर सुनाये। लेकिन वहाँ बाजा की व्यवस्था नहीं थी। ठाकुर ने रामचन्द्र दत्त से कहा – 'बाजा नहीं है। अगर अच्छा बाजा रहे, तो गाना खूब जमता है।' फिर हँसकर कहा – बलराम की व्यवस्था क्या है, जानते हो – ब्राह्मण की गौ जो खाय तो कम, पर दूध दे सेरों।'' (सब हँसते हैं) (वही, पृ.९०१) **(क्रमशः)**

रामनवमी विशेष

भारतीय साहित्य में श्रीराम चरित का प्रभाव

डॉ. कल्पना मिश्रा, सहायक प्राध्यापक हिन्दी
शासकीय दूधाधारी बजरंग महिला महाविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़

जब हम साहत्यि की बात करते हैं, तो रामजी पर वाल्मीकि रामायण और श्रीरामचरितमानस ये दोनों ग्रंथ सर्वाधिक लोकप्रिय व स्थापित हैं। इसके अलावा अन्य भी साहित्य राम पर आधारित हमें दिखता है। पर मैं तुलसीदासजी की बात से ही अपनी बात प्रारम्भ करूँगी –

श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनऊँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि।।
२/०/०

अर्थात् तुलसीदास जी कहते हैं कि श्री गुरुदेव के चरण-कमलों की रज से अपने मन रूपी दर्पण को पावन कर, रघुवर के विमल यश का वर्णन करने जा रहा हूँ, जो चारों फल धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को प्रदान करनेवाला है। रामजी को पढ़ने से, बोलने से, सुनने से पुरुषार्थ के चारों फल प्राप्त होते हैं, हम सब इस बात को जानते हैं। विश्व में तीन सौ से अधिक रामायण प्रचलित हैं। भारतीय साहित्य के अतिरिक्त भी हमको राम दिखते हैं। वाल्मीकि रामायण, कंब रामायण, रामचरितमानस तो है ही, साथ ही अद्‌भुत रामायण, अध्यात्म रामायण और आनन्द रामायण आदि प्रचलित हैं। रामजी के साहित्य पर आधारित रामलीला का मंचन किया जाता है, जो साहित्य के साथ-साथ अभिनय कला को जोड़ता है। इस रामलीला का मंचन भारत के अतिरिक्त अन्य देशों में किया जाता है, जिनमें अमेरिका में तो प्रतिवर्ष होता ही है। चीन, कंबोडिया, जावा, सुमात्रा इत्यादि दर्जन भर देशों में रामलीला का मंचन होता है। श्रीराम के सम्बन्ध में हमारी प्रथम स्मृतियाँ इन रामलीलाओं से ही आती हैं। जब हम बचपन में रामलीला का मंचन देखते थे या दूरदर्शन पर रामायण देखा था, वही हमें याद रहा। एक गीत जो मैंने बचपन में सुना था, आज भी याद है –

'राम करते रुदन, नीर भर के नयन तीर मारा।
हाय हाय मेरा लक्ष्मण प्यारा।।

इस प्रकार की स्मृतियाँ बचपन से रामलीला को देखते हुए हमारे अंदर समाहित होती हैं। राम-चरित वहीं से संस्कार के रूप में हमारे अंदर आता है। राम को जब हम उपनषिदों में देखते हैं, तो वे ब्रह्म स्वरूप कहे गए हैं, तत्त्वमसि कहे गए हैं। 'र' अर्थात् तत् जिसमें परमात्मा समाहित है। 'म' अर्थात् त्वं जिसमें जीवात्मा समाहित है और, 'आ' की मात्रा असि की द्योतक है। जैसे दूध में धवलता समाहित है, ऐसे ही भारतीय जीवन और संस्कृति में राम अनुस्यूत हैं। उनको अलग से अन्वेषण करने की आवश्यकता नहीं है। आधुनिक भारतीय साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त कहते हैं –

हे राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।
कोई भी कवि बन जाए, सहज संभाव्य है।।

राम के चरित को जो जान जाता है, उनके काव्य में स्वयं ही उसकी आसक्ति हो जाती है। मर्यादापुरुषोत्तम राम के बारे में हम सभी जानते हैं कि वे सगुण भी हैं, निर्गुण भी हैं। रामभक्त कवियों ने और कृष्णभक्त कवियों; दोनों ने उनके बारे मे लिखा है। ज्ञानमार्गी कवियों ने भी लिखा है –

एक राम दशरथ का बेटा, एक राम घट-घट में लेटा।
एक राम सकल पसारा, एक राम है सबसे न्यारा।।

जिसे हम न समझ पाते हैं और न जान पात पाते हैं, तो केवल हम नमन कर अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हैं। आधुनिक काव्य में तत्कालीन, समकालीन साहित्य में देखें, तो एक बहुत नए कवि हैं अमन अक्षर जी, जिन्होंने राम पर लिखकर ही ख्याति प्राप्त की है, उनका एक गीत यहाँ

प्रस्तुत करती हूँ –

सारा जग है प्रेरणा, प्रभाव सिर्फ राम हैं,
भावसूचियाँ बहुत हैं, भाव सिर्फ राम हैं।
कामनाएँ त्याग, पुण्य काम की तलाश में,
राज-पाठ त्याग, पुण्य काम की तलाश में।...
तीर्थ खुद भटक रहे थे धाम की तलाश में,..
राम वन गये थे, अपने राम की तलाश में,
आपमें ही आपका चुनाव सिर्फ राम हैं,
भावसूचियाँ बहुत है भाव सिर्फ राम हैं।।

राम स्वयं के अनुसन्धान में वन गए थे। इस प्रकार श्रीराम चरित का वर्णन किया गया है। मलूकदासजी कहते हैं –

अब तेरी शरण आयो राम।
जबैं सुनियो साध के मुख पतित पावन नाम,
विसय सेती भयो अजीज कह मलूक गुलाम।

मीराबाई कृष्ण-भक्त के रूप में प्रसिद्ध हैं, लेकिन वे कहती हैं – '**पायो जी मैंने राम रतन धन पायो**।' आगे **मीराबाई कहती हैं –**

अब तो मेरो राम नाम दूसरो न कोई।
प्रेम अंसुवन डार-डार अमर बेली बोई।
मेरो तो राम-राम दूसरो न कोई।।'

हमेशा हम कहते हैं कि '**हरि अनंत हरि कथा अनंता**।'

जब मुरारी बापू जी हर बार मानस का एक नया पक्ष लेकर उसकी विवेचना करते हैं, तो हर बार वही मानस की कथा नई लगने लगती है। युग-तुलसी रामकिंकर महाराज की रामचरित मानस की गूढ़ आध्यात्मिक व्याख्या अद्वितीय है।

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन सीय रघुबीर बिहारु।।
रामकथा ससी किरन समाना
संत चकोर जेहि करही पाना।।

जैसे चकोर चन्द्रमा की किरणों का पान करते हैं, वैसे ही रामजी की कथा चन्द्रमा के किरण जैसी है, जिसे संत जन चकोर की तरह पान करते हैं।

यह राम-चरित का स्वाद है, जिसका आस्वादन करने के बाद चकोर की तरह कोई दूसरी जगह भटक नहीं सकता। भारतीय साहित्य के अतिरिक्त कुछ विदेशी साहित्यकारों ने जब राम का चरित सुना, तो राम पर उन्होंने बड़े-बड़े ग्रंथ लिखे, जिसमें जॉर्ज ग्रियर्सन, फादर कामिल बुल्के, विन्सेंट स्मिथ और ग्रिफिथ महोदय हैं। रूसी साहित्यकार ए.पी. बरान्निकोव का बहुत बड़ा कार्य रामचरितमानस पर है

यदि क्षेत्रीय स्तर पर देखें, तो छत्तीसगढ़ी साहित्य में भी रामचरितमानस पर बड़ा काम हुआ है। शुकलाल प्रसाद पाण्डे जी ने चौबोला लिखा है और कपीलनाथ कश्यप जी ने रामचरितमानस का छत्तीसगढ़ी अनुवाद किया था, जिसका कुछ अंश प्रकाशित भी हुआ था। उस छत्तीसगढ़ी रामकाव्य की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं –

''संतन जनम अऊ राम जनम,
लाम डिडौना करिया काजर आंज लगायो।
देख-देख महतारी मन अब्बर सुख पावे।''

इसी प्रकार से जब भी हम अच्छे प्रशासन की बात करते हैं, तो हम राम-राज्य की बात करते हैं। राम-राज्य के लिए छत्तीसगढ़ी काव्य में लिखा है –

'सादा जीवन खान पान सबके बड़ सादा।
आइस कभू न कोनो के शरीर म बाधा।।
अपन अपन धंधा मां रहैं, सुमिरे हरिनामा।
चारि चुगुली ले अलग, मगन सब मन मां।।'

वैश्विक स्तर से लेकर, भारतीय स्तर तक एवं छत्तीसगढ़ के छोटे-छोटे गाँवों में रामायण मंडलियाँ बनी हुई हैं। प्रत्येक गाँव में रामनवमी के समय में रामायण पाठ, सुन्दरकाण्ड पाठ ये सब होता ही रहता है और मंडलियाँ नियमित इसका गान करती हैं। ये राम के चरित का हमारे लोक में जो प्रभाव है, इससे हमें दिखता है। जब हम कहते हैं कि राम का जन्म अयोध्या में हुआ, तो तुलसीदासजी स्वयं ही कहते हैं –

'जहाँ राम तहँ अवध निवासू।
तहाँ दिवस जहाँ भानु प्रकासू।।'

अर्थात् जहाँ सूर्य का प्रकाश है, वहीं दिन है और जिस हृदय में राम हैं, वही हृदय अयोध्या है। अत: राम को प्राप्त करने के लिये अयोध्या जाने की आवश्यकता नहीं है, खोजने पर वे हमारे हृदय में ही मिल जायेंगे।

इसी प्रकार राम को हम कोसल का भांजा मानते हैं। क्योंकि कोसल कौशल्या माता का मायका है। इस सम्बन्ध से राम हमारे (छत्तीसगढ़ के) भांजा हैं। इसलिए यहाँ पर जितने भी भांजे हैं, सबको पूजा जाता है, आदर दिया जाता है, हमारे बीच में यह रामचरित का प्रभाव है।

हिन्दी साहित्य में सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला द्वारा रचित

एक बहुत अच्छा ग्रंथ है – 'राम की शक्तिपूजा'। यह बंगाली कृत्तिवास रामायण पर आधारित है। उसमें राम को एक सामान्य मनुष्य की तरह दिखाया गया है, जिसमें राम निराश भी होते हैं, हताश भी होते हैं और पुन: प्रयास करके विजयी भी होते हैं। उसका एक पद है –

अन्याय जिधर है उधर शक्ति
'धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध,
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।'

रामजी निराश हो गए कि मुझे अपने जीवन में हमेशा शोध ही क्यों करना पड़ता है? परंतु स्वयं आत्मशक्ति से वे पुन: कहते हैं –

'एक ओर मन रहा राम का जो न थका
जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय।'

वे स्वयं आत्मशक्ति से उठते हैं और कहते हैं कि राम थक नहीं सकता। राम दीन हीन नहीं हो सकता। राम हमेशा विनय की अवस्था में नहीं हो सकता और फिर राम खड़े होते हैं। ये अन्तर्संघर्ष और आत्मसाक्षात्कार का काव्य है। इसमें वे शोषण के विरुद्ध कहते हैं –

'आराधन का दृढ़ आराधन से दो उत्तर।
तुम वरो विजय संयत प्राणों से प्राणों पर।'

अर्थात् आराधन का उत्तर दृढ़ आराधन से दिया जाए। उसमें राम स्वयं प्रश्न करते हैं और स्वयं राम ही हमको उत्तर देते हैं।

जब हम अयोध्याकाण्ड पढ़ते हैं, उसमें रामजी का परचिय मिलता है –

गुरु सिख देइ राय पहिं गयऊ।
राम हृदय अस बिसमय भयऊ।। २/९/४

कैकेई कहती हैं कि भरत को राजा बनाना चाहिए, उससे पहले राम कहते हैं –

जनमे एक संग सब भाई।
भोजन सयन केलि लरिकाई।।
करनबेध उपबीत बिआहा।
संग संग सब भए उछाहा।।
बिमल बंस यहु अनुचित एकू।
बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू।। २/९/५-७

अर्थात् हमारा इतना विमल वंश है कि चारों भाइयों का जन्म, अन्नप्राशन, उपनयन एवं विवाह संस्कार एक साथ हुआ है, किन्तु इस विमल वंश में एक अनुचित हो रहा है कि भाइयों को छोड़कर मुझ बड़े को अकेले राजा बनाया जा रहा है। यह राम के दिव्य चरित्र की विशेषता है, जो कैकेयी के प्रश्न करने से पहले ही अपने पिता से प्रश्न करते हैं। वे कहते हैं कि मुझे अकेले नहीं, बल्कि चारों भाइयों को राजा बनाइए।

रामचरितमानस को जब हम पढ़ते हैं, तो कोई भी दोहा किसी भी पृष्ठ का उठा लें, उससे कोई न कोई नैतिक शिक्षा अवश्य मिलेगी। हमारे यहाँ लड़कियाँ जब ब्याह के जाती हैं, तो उनको रामचरितमानस दिया जाता है कि जीवन में जब कोई संदेह आए, जीवन में जब कोई दुविधा आए, तो मानस खोल के पढ़ लेना, इसमें तुम्हारा समाधान अवश्य मिलेगा। हमारे यहाँ पंचांग में रामाज्ञा प्रश्नावली होती है, जिसमें से हम अपने संशय दूर करते हैं। जब सुबह हम उठते हैं, तो कहते हैं राम-राम। जब कोई मर जाता है, तो कहते हैं कि राम नाम सत्य है। हमारे यहाँ जीवन से लेकर मृत्यु तक, उठने से लेकर सोने तक राम कण-कण में समाए हुये हैं। रामचन्द्रिका के अलावा रैदास कहते हैं –

'जब राम नाम कही गावेगा, तब भेद अभेद समावेगा।
जे सुखवैया रस के पर से सो सुख का कही गावेगा।'

राम जन्मोत्सव के परिप्रेक्ष्य में एक सोहर है, जो लोक में प्रचलित है –

कउने घड़ी भए श्रीराम कि कवने घड़ी लछिमन हो,
ललना कवने घड़ी भरत भुआल, तीनों घर सोहर हो।

इस प्रकार से आगे इस सोहर में तीनों माताओं के नाम आते हैं, तीनों बच्चे किस-किस घड़ी में हुए, गाए जाते हैं। यह सोहर घर-घर में गाया जाता है। किसी भी बच्चे का जन्म होता है, तो हम रामजी का सोहर गाते हैं। बच्चे को हम रामस्वरूप समझते हैं। यह राम का हमारे जीवन में अस्तित्व है। जब मैं उपन्यासों को देखती हूँ, तो उसमें नरेंद्र कोहली के 'अभ्युदय' उपन्यास की ओर हमारी दृष्टि जाती है, जिसमें राम को एक नए अवतार में दिखाया गया है, जिसमें राम युगों-युगों के अन्धकार को चीरकर भक्तिकाल की भावुकता से बाहर आए हैं। आधुनिक यथार्थ की जमीन पर खड़े दिखते हैं। अभ्युदय के राम को देखकर व्यक्ति चमत्कृत हो जाता है, जिसमें राम एक राजकुमार के रूप में नहीं, बल्कि अपने आत्मबल से शोषित, पीड़ित, त्रस्त

जनता के अंदर प्राण फूँकते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। उसमें हर पात्र को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में दिखाया गया है। राम सर्वदा ही साहित्य में रहे हैं और लोकप्रिय रहे हैं। हमारे छत्तीसगढ़ में रामनामी सम्प्रदाय है। रामनामी सम्प्रदाय के लोग अपने पूरे शरीर में रामनाम का गोदना गुदवाते हैं। उनके चादर में, बिस्तर में, उनके दीवारों पर हर जगह राम राम है। इस प्रकार छत्तीसगढ़ में राम विशेष रूप से विद्यमान हैं। मधुबनी पेंटिंग में राम हैं। मिथिला सीता माता का घर है, मैथिली गीतों में राम हैं। मिथिला में राम को दामाद के रूप में देखा जाता है। वहाँ के लोकगीतों में राम को दामाद के रूप में सम्बोधित कर गाया जाता है –

ए पहुना एही मिथिले में रहुना।
जौने सुख बा ससुरारी मां तौने सुख बा कहुना।।
ए पहुना एही मिथिले में रहुना।

अर्थात् हे पहुना श्रीरामजी ! आप इस मिथिला में ही रह जाइए। जो सुख ससुराल में है, वह कहीं भी नहीं है। आपको सब सुख यहाँ प्रदान किया जायेगा, लेकिन मिथिला छोड़ के मत जाइए।

इस तरह से राम हमारे साहित्य में हैं, लोक साहित्य में हैं और संस्कारों में हैं। जब हम मानस पढ़ते हैं, तो जो नीतिवाक्य बोलचाल में हम सुनते हैं कि राम को जो जैसे देखेगा, राम उसे उसी रूप में मिलेंगे –

जाकी रही भावना जैसी।
प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।।
तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग।।
५/४/०

यदि क्षण मात्र के लिए भी हमें सत्संग मिले और स्वर्ग के सुख के साथ तौला जाय, तो स्वर्ग के सभी सुख उस क्षण भर के सत्संग की तुलना में कम पड़ जायेंगे।

जब हमारा वश नहीं चलता है, तो हम यह कहकर अपने मन को समझा लेते हैं –

होइहि सोइ जो राम रचि राखा। १/५१/७

इसी प्रकार जब हमें किसी को डाँटना होता है, तो हम कहते हैं – **भय बिनु होइ न प्रीति। ५/५७/०**

हम प्रात:काल उठकर बच्चे को प्रणाम करना सिखाते हैं, कहते हैं –

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा।
मातु पिता गुरु नावहिं माथा।। १/२०४/७

श्रीराम भले ही भगवान हैं, लेकिन वे मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाते हैं और सदाचरण का पालन करते हैं। इसलिये प्रात: उठकर माता, पिता, गुरु को प्रणाम अवश्य करना चाहिए। इसके अलावा छत्तीसगढ़ में भी डंडा गीत, राउत नाचा में भी रामचरित का प्रयोग किया जाता है। रामचरितमानस में कहा गया –

काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत।।
५/३८/०

सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान।।
५/६०/०

इस भवसागर से पार होने के लिए राम को किसी भी रूप में हम ग्रहण करें, उनके नाम का श्रवण करें, उनका भजन करें, तो इस सिन्धु से हम पार हो जायेंगे। तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस को बहुजनहिताय बहुजनसुखाय की भावना से लिखा था। राम कण-कण में हैं, हमारे बीच में, हममें, हमारे अस्तित्व में हैं। जब कभी कोई संशय हो, व्यग्रता हो, मार्ग न मिल रहा हो, तो श्रीराम का चरित हमारा पथ-प्रदर्शन करता है। तभी तो भक्त लोग गाते हैं – हमारे साथ श्रीरघुनाथ तो किस बात की चिन्ता। जय श्रीराम ! ○○○

पृष्ठ १९० का शेष भाग

अत्र उच्यते; अत्यल्पम् इदम् उच्यते 'य एषोऽन्तर्हृदय आकाशस्तस्मिञ्शेते' (बृहदा. २/१/१७) इति अन्तर्हृदय-परिच्छेदे सुतरां स्वयं-ज्योतिष्ट्वं बाध्येत।

भाष्यार्थ – पूर्वपक्षी – ऐसा होने पर तो – ''उस (स्वप्न की) अवस्था में यह पुरुष स्वयंज्योति होता है'' – यह विशेषण निरर्थक हो जाएगा!

समाधान – इसका उत्तर दिया जा रहा है कि तुम्हारा आक्षेप अत्यन्त छोटा है, क्योंकि – ''हृदय के अन्दर यह जो आकाश है, (आत्मा) उसमें सोता है'' – इस श्रुति में अन्तर-हृदय को सीमित कर दिया गया है, अत: उसकी स्वयंप्रकाशता बाधित हो जाती है। **(क्रमश:)**

भारत की सशक्त बेटियाँ

स्वामी गुणदानन्द

रामकृष्ण मठ, नागपुर

स्वामी विवेकानन्द ने कहा है – अमेरिका की प्रत्येक स्त्री को इतनी उत्तम शिक्षा प्राप्त होती है, जिसकी कल्पना भी अधिकांश भारतीय स्त्रियों के लिए कठिन है। क्या हम अपनी स्त्रियों को वैसी उच्च कोटि की शिक्षा नहीं दे सकते? हमारा कर्तव्य है कि इस महान कार्य को तुरन्त आरम्भ कर दें। सर्वप्रथम स्त्रीजाति को सुशिक्षित बनाओ, फिर वे स्वयं कहेंगी कि उन्हें किन सुधारों की आवश्यकता है। तुम्हें उनके प्रत्येक कार्य में हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार है?

आइये ! जानते हैं अटूट देश-प्रेम तथा देशसेवा की भावना से ओतप्रोत देश के कल्याण तथा समाज सेवा के लिए तत्पर एवं समर्पित इल्मा अफरोज के बारे में।

नारी अपनी समस्या का समाधान स्वयं कर लेगी

इल्मा अफरोज भारतीय पुलिस सेवा (आईपीएस) में पुलिस अधिकारी के रूप में कार्यरत हैं। वे एक किसान की बेटी हैं। वे आईपीएस के रूप में सेवा दे रही हैं। इल्मा अफरोज का जन्म उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद के एक छोटे-से कस्बे कुंदरकी में हुआ। इल्मा अफरोज के पिताजी एक छोटे किसान थे। वे जब मात्र १४ वर्ष की थीं, तब उनके पिता कैंसर के शिकार हो गए और उनका देहान्त हो गया। इसके बाद पूरे परिवार का उत्तरदायित्व उनकी माँ पर आ गया। पिता के देहान्त के बाद परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गई, जिससे इल्मा अफरोज और उनकी माँ को खेतों में काम करना पड़ा। माँ खेती से प्राप्त पैसों से परिवार की आर्थिक रूप से सहायता करती थीं। बेटी और १२ साल के पुत्र के पालन-पोषण और देखभाल करने के लिए माँ ने बहुत संघर्ष किया।

इल्मा अफरोज को बचपन से ही पढ़ाई में रुचि थी। उनकी माँ ने उनके अध्ययन में खूब सहायता की और उन्हें खूब पढ़ाया-लिखाया। मुरादाबाद से स्कूली पढ़ाई पूरी करने के बाद इल्मा अफरोज ने दिल्ली के सेंट स्टीफंस में प्रवेश लिया। वहाँ से उन्होंने फिलॉसफी में स्नातक तक की पढ़ाई पूरी की। सेंट स्टीफंस में कॉलेज का अध्ययनकाल उनके जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण काल था। वहाँ उन्होंने बहुत कुछ सीखा। अपनी कड़ी मेहनत के बल पर उन्हें ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी से स्कॉलरशिप मिली, लेकिन इल्मा के पास उस समय विदेश जाने के लिए टिकट के पैसे नहीं थे। तब उन्होंने गाँव के चौधरी दादा से मदद ली थी और उन्होंने वहाँ से स्नातकोत्तर का अध्ययन किया।

ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में उन्हें स्कॉलरशिप तो मिल गई थी, लेकिन अपने बाकी खर्चों के लिए वे वहाँ ट्यूशन पढ़ाती थीं और बच्चों की देखभाल करती थीं। उस बीच उनके गाँववाले उनकी माँ से कहने लगे थे कि अब वह विदेश में ही रहेंगी और कभी भारत वापस नहीं आएँगी।

स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा था – 'उन्नति के लिए सबसे पहले स्वाधीनता की आवश्यकता है। यदि तुम लोगों में से कोई यह कहने का साहस करे कि मैं अमुक स्त्री अथवा अमुक लड़के की मुक्ति के लिए काम करूँगा, तो यह अत्यन्त अन्याय और भूल होगी। मुझसे बारम्बार पूछा जाता है कि सारी स्त्रीजाति की उन्नति के उपाय के सम्बन्ध में आप क्या सोचते हैं? मैं इस प्रश्न का अन्तिम उत्तर देता हूँ – क्या मैं स्त्री हूँ? जो तुम बार बार मुझसे यही और ऐसा निरर्थक प्रश्न पूछते हो? स्त्रीजाति के प्रश्न को हल करने के लिए आगे बढ़नेवाले तुम हो कौन? क्या तुम हर एक विधवा और हर एक स्त्री के भाग्यविधाता साक्षात् भगवान हो? अलग हो जाओ। अपनी समस्याओं का समाधान वे स्वयं कर लेंगी।'

इल्मा अफरोज अपनी माँ के साथ

स्वदेश प्रेम

इल्मा अफरोज ने खेतों में काम करने से लेकर ऑक्सफोर्ड तक का सफर तय किया। पोस्ट ग्रेजुएशन करने के बाद इल्मा अफरोज एक वॉलंटियर प्रोग्राम में शामिल होने के लिए न्यूयॉर्क गई थीं। वहाँ उन्हें Financial Estate कम्पनी में नौकरी का एक अच्छा सुअवसर मिला था। लेकिन वे अपनी शिक्षा के लिए अपनी माँ और देश को अधिक महत्त्व देती हैं। इसीलिए विदेश में नौकरी करने के बजाय इल्मा अफरोज भारत वापस आईं और अपने देश की सेवा करने के लिए भारत आकर उन्होंने यूपीएससी परीक्षा की तैयारी शुरू कर दी।

अपने देश के प्रति अटूट प्रेम तथा देश-सेवा की भावना से ओतप्रोत इल्मा अफरोज ने प्रशासनिक सेवा की (UPSC) कठिन परीक्षा के लिए कठोर परिश्रम किया। उन्होंने अपने परिवार की सहायता और कठोर परिश्रम के बल पर UPSC की परीक्षा पहले ही प्रयास में उत्तीर्ण की और उसमें २१७वाँ स्थान प्राप्त किया। तब उनकी आयु २६ वर्ष थी। इल्मा अफरोज ने लोगों के कल्याण के लिए तथा देश की सेवा करने के लिए भारतीय पुलिस सेवा (IPS) को चुना। वर्तमान वे शिमला में SP SDRF के पद पर कार्यरत हैं।

आईपीएस अफसर इल्मा अफरोज का जीवन आज की युवा पीढ़ी के लिए प्रेरणादायक है।

आधुनिक भारतीय नारियाँ विभिन्न स्तरों तथा आयामों में संघर्ष कर रही हैं। वे पुरुषों के साथ प्रतिस्पर्धा में कम नहीं हैं। वे विभिन्न प्रकार से संघर्ष करती हुईं अपने प्रतिभा के बल पर देश और देशवासियों की सेवा में अपना योगदान देकर देश का नाम गौरवान्वित कर रही हैं। आइये जानते हैं भारतीय महिला खिलाड़ी के बारे में जिन्होंने अपने अतुलनीय प्रदर्शन से देश का नाम रौशन किया है।

असफलता से डरो नहीं

साइखोम मीराबाई चानू एक भारतीय भारोत्तोलन खिलाड़ी हैं। मीराबाई चानू का जन्म ८ अगस्त, १९९४ ई. को भारत के उत्तर-पूर्वी राज्य मणिपुर की राजधानी इम्फाल में एक अत्यन्त ही साधारण परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम साइखोम कृति और माता साइखोम ओंगबी टोंबी लेइमा हैं। पिता PWD के कर्मचारी हैं एवं माँ एक साधारण-सी दुकान चलाती हैं।

मीराबाई चानू ने २०१६ में रियो ओलम्पिक के लिए क्वालीफाई किया था, लेकिन इनके द्वारा किये गए वेटलिफ़्ट को अस्वीकृत कर दिया गया था, जिससे वे रियो ओलम्पिक से बाहर हो गयी थीं और इनका ओलम्पिक में पदक जितने का सपना चकनाचूर हो गया था। चानू ओलम्पिक के मंच से रोती हुई गयी थीं। वे इस हार से काफी टूट चुकी थीं। परन्तु इस हार को जीत में बदलने के लिए चानू ने कठोर परिश्रम किया और सभी कठिनाइयों पर विजय पाते हुए, मीराबाई चानू ने टोक्यो ओलम्पिक में ४९ किलोग्राम की केटेगरी में सिल्वर मेडल जीतकर एक नया कीर्तिमान स्थापित कर अपने राष्ट्र को गौरवान्वित किया।

मीराबाई चानू

मेडल जितने के बाद मीराबाई चानू ने कहा कि मैं इसके लिए ५ वर्ष से प्रतीक्षा कर रही थी। हालाँकि मैं गोल्ड मेडल तो नहीं जीत पायी, पर मेरे लिए सिल्वर मेडल जीतना भी एक उपलब्धि से कम नहीं है। सुश्री कर्णम मल्लेश्वरी (कांस्य पदक सिडनी ओलंपिक २०००) के बाद चानू वेटलिफ्टिंग में पदक जीतने वाली दूसरी व भारत की ओर से रजत पदक हासिल करने वाली पहली भारतीय वेटलिफ्टर बनीं।

भारत की प्रसिद्ध वेटलिफ्टर ने टोक्यो ओलम्पिक २०२१ के भारोत्तोलन खेल में भारत की ओर से प्रदर्शन करते हुए ४९ किग्रा वर्ग में रजत पदक जीतकर अपने देश का नाम गौरवान्वित किया। यही नहीं मीराबाई चानू ने इससे पहले कॉमनवेल्थ खेलों में गोल्ड मेडल जीते हैं। २०२१ (२०२०) के टोक्यो ओलंपिक खेलों में रजत पदक जीतने वाली वे भारतीय प्रथम महिला हैं।

वर्ष २०२२ में बर्मिंघम में हुए कॉमनवेल्थ गेम्स में मीराबाई चानू ने ४९ किग्रा वेटलिफ्टर में १०९ किग्रा वेटलिफ्टिंग कर गोल्ड मेडल अपने नाम किया।

शेष भाग पृष्ठ २११ पर

सारगाछी की स्मृतियाँ (१२४)

स्वामी सुहितानन्द

(स्वामी सुहितानन्द जी महाराज रामकृष्ण मठ-मिशन के उपाध्यक्ष हैं। महाराजजी जगजननी श्रीमाँ सारदा देवी के शिष्य स्वामी प्रेमेशानन्द जी महाराज के अनन्य निष्ठावान सेवक थे। उन्होंने समय-समय पर महाराजजी के साथ हुए वार्तालापों के कुछ अंश अपनी डायरी में गोपनीय ढंग से लिखकर रखा था, जो साधकों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। 'उद्बोधन' बँगला मासिक पत्रिका में यह मई-२०१२ से २०२२ तक अनवरत प्रकाशित हुआ था। पूज्य उपाध्यक्ष महाराज की अनुमति से इसका अनुवाद रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के स्वामी प्रपत्त्यानन्द और वाराणसी के रामकुमार गौड़ ने किया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' में क्रमश: प्रकाशित किया जा रहा है। – सं.)

२९-०१-१९६५

शुक्रवार। महाराज कुछ दिनों से अन्तर्मुखी हैं। आज भोर में श्रीमाँ का पैर फैलाकर बैठनेवाला चित्र पास लाकर रखे हैं। खुजली थोड़ी भी कम नहीं हो रही है। शरीर भी शिथिल है।

दोपहर में सुदिन महाराज को उन्होंने पत्र लिखा – 'तुम आर.के.परमहंस के अस्पताल में भर्ती हुए हो। डॉक्टर सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान हैं, इसलिए सब रोग ठीक हो जाएगा। किन्तु यदि तुम सभी से छिपकर रात में भाग जाओ, तो रोग ठीक होने में देर लगेगी।''

अपराह्न में भ्रमण के समय अपूर्वानन्द महाराज ने कहा, 'कैसे हैं? आप हैं इसी से तो कितनी ही स्मृतियाँ मन में आती हैं। बाहर से कितने लोग आते हैं, आनन्द और तृप्ति पाते हैं। इसके अतिरिक्त काशी तो आनन्दमय स्थान है।''

प्रेमेश महाराज – बाबा विश्वनाथ और यहाँ के आप लोगों जैसे साधुओं और भक्तों के चरणों-तले पड़ा हूँ।

अपूर्वानन्द महाराज – महापुरुष महाराज कहते थे कि काशी में तो सभी की मुक्ति होती है। काशी में सभी साधु हैं, सभी मुक्त होंगे।

प्रेमेश महाराज – किन्तु बड़ी देर कर रहे हैं। बहुत कष्ट हो रहा है।

अपूर्वानन्द महाराज – यह तो ठीक है। किन्तु इसमें भी उनका हाथ है। शायद आपके द्वारा उन्हें कोई कार्य कराना है। शरत् महाराज तो किसी की सेवा नहीं लेते थे। अन्तिम काल में तेरह दिन बेहोश हो गए थे। तब महापुरुष ने कहा था – भक्तों की सेवा करने के आग्रह को पूरा करने के लिए वे इस तरह भक्तों की इच्छा पूरी कर गए। सचमुच, उस समय कितने ही साधु-भक्तों ने आकर उनकी सेवा की थी।

सेवक – यदि आपको स्वामीजी के उत्सव में बोलने को कहा जाए, तो आप क्या करेंगे?

महाराज – मैं कहूँगा – भागवत में है कि कैसे भक्ति होती है। उत्सव के द्वारा भी भगवान में भक्ति होती है। वह विशेष श्लोक उद्धृत करूँगा। उत्सव में भक्तों को देखकर भगवान की बात ही स्मरण हो आती है।

एक व्यक्ति – बताइए, मेरी मुक्ति होगी कि नहीं। यदि मैं अभी मर जाऊँ, तो क्या मेरी मुक्ति होगी?

महाराज – काशी में मरने पर तो मुक्ति होगी ही।

प्रश्न – नहीं, काशी नहीं, काशी के अतिरिक्त यदि अन्यत्र इसी समय मर जाऊँ, तो ...।

महाराज – मैं कैसे जानूँगा।

प्रश्न – आपको क्या लगता है?

महाराज – होगी, मुक्ति होगी। मुझे तो लगता है, तुम्हारी मुक्ति होगी।

३१-१-१९६५

सेवक – महाराज, शरत महाराज का कंठ-स्वर कैसा था?

महाराज – याद नहीं है, किन्तु एक दिन उनका गाना सुना था। उनके शरीर की तुलना में कंठ-स्वर पतला था। महापुरुष महाराज को एक दिन गाते हुए सुना था। अरे, एक दिन अतिथि-कक्ष में रामनाम हो रहा था। हरिपद महाराज ठेका (तबले पर) दे रहे थे। ठेका ठीक नहीं हो रहा था। महापुरुष महाराज कहीं से आकर, बैठकर ठेका देने लगे। अतिथि-कक्ष में मैंने एक दिन महाराज को गान सुनाया था।

५-२-१९६५

सेवक – महाराज आप मुझे तो देख रहे हैं, मुझसे साधन-भजन होगा क्या?

महाराज – खूब होगा।

सेवक – जब तक यह कार्य कर रहा हूँ, तब तक

कोई शिकायत नहीं, अच्छे से हूँ। यदि मृत्यु-काल तक इसी तरह चले, तो मैं सत्य कहता हूँ, मुझे रंचमात्र भी शिकायत नहीं होगी। किन्तु आप तो चिरकाल तक रहेंगे नहीं। उसके बाद यदि साधन-भजन में रुचि नहीं होती है, तो मारा जाऊँगा, शायद सबका दोष देखते हुए घुमूँगा, नहीं तो अन्य लोग मुझे ले जाकर दोष-दर्शन में लगा देंगे, तब दुखी हो जाऊँगा। मेरे भीतर साधन-भजन की कौन-कौन सी बाधा देखते हैं, बताइए न !

महाराज – तुम्हें तीन बातों के प्रति सावधान रहना होगा। प्रथम – कार्य बढ़ाने की सनक। अवश्य ही तुम अभी एक ऐसे परिवेश में हो, जहाँ कार्यों को घटाने की भी सुविधा नहीं है। इसीलिए तो कहता हूँ कि साधन-भजन का अनुकूल परिवेश चाहिए। तुम्हारी नोट-बुक में भी अवश्य ही यह बात है कि परिवेश की प्रतीक्षा में बैठे रहने से काम नहीं चलेगा। किसी वस्तु को लेकर मतवाला हो उठने पर परिवेश अपने आप उत्पन्न हो जाता है। द्वितीय – इधर-उधर देखने की सनक। चारों ओर कहाँ, क्या हो रहा है, केवल यही देखते हुए घूमते रहना।

सेवक – मैं सावधान हो रहा हूँ, प्रयास कर रहा हूँ। जो कोई जो कुछ कर रहा है, करे न।

महाराज – तृतीय – तुम यह सब लेख पढ़कर धारणा कर सकते हो। अनेक बातें जान गए हो, सुस्पष्ट समझाते हुए बता भी सकते हो। इसीलिए कोई प्रसंग आते ही उस विषय में अच्छी तरह दो-चार बातें बता सकते हो। तुम किसी बात को सुस्पष्ट रूप से समझाने का बहुत प्रयास करते हो, इसीलिए अधिक बातें कहते हो। यही अधिक बातें बताना कम करना होगा। मैं समझता हूँ कि अकेले एक सड़े-गले शरीर को लेकर रहना पड़ता है। इसीलिए किसी के आते ही दो चार बातें कहने की इच्छा होती है।

सेवक – यह तो ठीक है, किन्तु यदि अभी बलपूर्वक इसे बंद कर देता हूँ, तो मन में अन्य कोई वस्तु नहीं रहने पर दमित भावनाएँ किसी समय फूट पड़ेंगी। यह जो किसी एक व्यक्ति की चर्चा करता हूँ, मैं सब समझता हूँ, किन्तु सिनेमा देखने की तरह यह एक सुख है और वैसा थोड़ा एक सांसारिक सुखभोग जैसा कर लिया। वास्तव में उस व्यक्ति को मैं पहले से ही पसन्द नहीं करता हूँ।

महाराज – क्या करूँ, मेरा भाग्य-लेख है ! अन्तिम काल में काशी में मरने के लिए आ गया। बच्चा, बचपन से ही पीछे-पीछे घूम रहा है।

सेवक – अच्छा, आपने प्रतिकूल बातें तो बता दीं। मेरे में अनुकूल बातें क्या-क्या हैं?

महाराज – और बातें कहने से कष्ट होगा। सोच-विचारकर बातें कहनी पड़ती हैं।

सेवक – भले ही ऐसा हो, थोड़ा कष्ट करके दो-चार बातें ही कहिए। आपने इतनी बातें कहीं और यही दो-चार बातें कहने में इतना कष्ट हो रहा है। माँ ने एक बार कहा था – इतनी बातें कहने से, दवा की तरह लाभकारी बातें कहने से ही काम हो जाता।

महाराज – तुम्हारा घर का संस्कार अच्छा है। तुम्हारे माता-पिता साधक नहीं होने पर भी भक्त थे। तुमने श्रीरामकृष्ण को इष्ट के रूप में ग्रहण किया है। अन्तिम जन्म नहीं होने पर ठाकुर को तुम नहीं लेते।

सेवक – हाँ, महाराज, इसीलिए कहता हूँ, जिससे जीवन भर साधु का मान और मरण के समय रामकृष्ण नाम रहे। अन्य विचार मस्तिष्क में रहे ही नहीं।

महाराज – तुम मेरे लिए इतना करते हो। मेरे सभी इष्ट मित्रों की शुभेच्छा तुम्हारे लिए है। इसके अतिरिक्त मैं माँ से व्याकुल भाव से कहता हूँ – माँ, यह तुम्हारे पुत्र के लिए इतना करता है, यदि यह अच्छा नहीं होगा, तो सभी लोग मुझे गाली देंगे और कहेंगे कि इस व्यक्ति ने ही इस लड़के का मस्तिष्क खराब किया है। यदि तुम्हारा कुछ खराब होगा, तो मेरी बदनामी होगी ही, माँ की भी बदनामी होगी।

१८-२-१९६५

कई दिनों से महाराज का स्वास्थ्य खराब चल रहा है। खुजली का प्रकोप बढ़ गया है। थोड़ी भी कम नहीं हो रही है। पढ़ना-सुनना एकदम बंद है, बातें भी प्राय: कम ही करते हैं, कुछ सुनते भी नहीं है। भरत महाराज ने सेवा-भार लिया है।

सेवक – भण्डारे में खाना अच्छा है?

महाराज – भण्डारे में खाने से बचने का प्रयास करना अच्छा है। साधारणतया, भण्डारे में बाहर का कोई व्यवसायी, पता नहीं श्राद्ध आदि किस उद्देश्य से भण्डारा देता है। उसमें खाना ठीक नहीं, वैसा सब खाने से चित्त अशुद्ध होता है। किन्तु हम लोगों का तो साधारणतया ठाकुर

का भोग होता है। ठाकुर का प्रसाद समझकर खाने से कुछ हानि नहीं है। यह जो दुर्गादास महाराज का भण्डारा हुआ, एक गृहस्थ शिष्या ने अपने पिता के गुरु के श्राद्ध की तरह भोजन कराया। यह सब अपनी मानसिकता पर निर्भर करता है। यदि ठाकुर का प्रसाद समझो, तो कोई परेशानी नहीं, किन्तु यदि श्राद्ध के रूप में बोध बना रहता है, तो उसे न खाना ही अच्छा है। कई बार साधु का जो धन रहता है, उससे भण्डारा होता है, उससे कोई दोष नहीं। चैतन्यदेव ने भी हरिदास का भण्डारा दिया था। यह ठीक है कि खाना-पीना, चलना-फिरना साधुओं के संग करना ही अच्छा है, अकेले-अकेले रहना अच्छा नहीं है।

सेवक – ठाकुर के भोग या शयन की अवस्था में उन्हें प्रणाम किया जा सकता है?

महाराज – हाँ, बिल्कुल ! ठाकुर को तो हमलोग जानते हैं कि वे व्यक्ति नहीं हैं, सर्वव्यापी समष्टि हैं। तिथि-नक्षत्र आदि देखकर यात्रा करना, इन सब छोटी-मोटी बातों पर ध्यान न देना ही अच्छा है। महापुरुष महाराज कहते थे ''अरे, यह तो एक ही घर है, इस घर से उस घर। एक आश्रम से दूसरे आश्रम में जाओगे। इसमें इतना सब क्यों?''

सेवक – माँ ने शान्तानन्दजी महाराज से कहा था – ''साधु जिस समय यात्रा करता है, वही समय शुद्ध है।'' एक अन्य व्यक्ति से माँ कहती हैं – ''यह कार्तिक मास है। यम का चारों द्वार खुला है। मैं माँ होकर कैसे जाने को कहूँ।''

महाराज – वास्तविक बात यह है कि वे लोग सभी बातों को मानकर उसी से ऊपर उठने का मार्ग बता देते थे। ठाकुर छींक तथा छिपकली आदि सब मानते थे और आवश्यक होने पर सबकी उपेक्षा कर देते थे।

सेवक – बातों के बीच में चिड़चिड़ापन क्यों आ जाता है?

महाराज – ठीक जगह पर कार्य नहीं मिलने के कारण ही मस्तिष्क गरम हो जाता है।

सेवक – अर्थात् वह वहाँ उपयुक्त नहीं है?

महाराज – हाँ।

सेवक – क्या साधन-भजन में मेरी रुचि होगी या कर्मोन्माद हो जाएगा?

महाराज – तुम्हारी खूब सूक्ष्म बुद्धि है और तीक्ष्ण सजग दृष्टि है। मेरी बातों को बड़ी अच्छी तरह से समझते और ध्यान देते हो। इससे मैं समझ गया हूँ कि तुममें सत्त्वगुण है। इसलिए आशा है। तुम्हारे लिए अध्यापन कार्य और दिनभर अपने भाव में बिताना अच्छा है।

सेवक – बाबा, मास्टरी (अध्यापन कार्य) नाम से भय लगता है। बच्चों (विद्यार्थियों) और विषयों को लेकर व्यस्त रहना पड़ेगा।

महाराज – मेरे पास रहते हुए ऐसा भय !

सेवक – नहीं तो सीधे उत्तरकाशी, ऋषिकेश चला जाऊँगा।

महाराज – ठाकुर हैं, ठाकुर हैं, ठाकुर हैं।

सेवक – आप ऋषिकेश में कैसे समय व्यतीत करते थे?

महाराज – ध्यान-जप, पाठ और शेष समय में मित्रों के साथ गपशप। **(क्रमशः)**

पृष्ठ १८९ का शेष भाग

१९१६ में वे महात्मा गाँधी जी से मिलीं उसके बाद उनकी सोच पूरी तरह से बदल गई और उन्होंने अपनी पूरी ताकत भारत देश को आजाद करवाने में लगा दी। उसके बाद वह पूरे देश में घूमी और मुख्य रूप में महिलाओं के दिलों में आजादी की अलख जगाई और आजादी के लड़ाई में आगे आने को प्रोत्साहित किया।

१९२५ में सरोजिनी कानपुर से Indian Congress के अध्यक्ष बनने के लिये खड़ी हुई और जीत कर पहली महिला अध्यक्ष बन गई।

सरोजिनी ने महात्मा गाँधी के आन्दोलनों में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। १९३० में गाँधी के गिरफ्तारी के बाद सरोजिनी जी ने ही सत्याग्रह का नेतृत्व किया और उन्हें २१ महिनों तक जेल में भी जाना पड़ा।

१९४९ में आजादी के बाद सरोजिनी जी को उत्तर प्रदेश का गवर्नर बनाया गया और वे भारत की पहली महिला गवर्नर थीं। २ मार्च, १९४९ को ऑफिस में काम करते हुए उन्हें हार्ट अटैक आया और वह चल बसीं। सरोजिनी जी भारत देश की सभी महिलाओं के लिये आदर्श का प्रतीक हैं और वे एक सशक्त महिला थीं, जिनसे हमें प्रेरणा मिलती है।

तो बच्चों, सरोजिनी नायडू हमें अपना प्यारा देश भारत की सेवा करने हेतु सदैव प्रेरणा देती रहेंगी। ○○○

रामराज्य का स्वरूप (८/२)

पं. रामकिंकर उपाध्याय

(पं रामकिंकर महाराज श्रीरामचरितमानस के अप्रतिम विलक्षण व्याख्याकार थे। रामचरितमानस में रस है, इसे सभी जानते हैं और कहते हैं, किन्तु रामचरितमानस में रहस्य है, इसके उद्घाटक 'युगतुलसी' की उपाधि से विभूषित श्रीरामकिंकर जी महाराज थे। उन्होंने यह प्रवचन रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के पावन प्रांगण में १९८९ में विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में दिया था। 'विवेक-ज्योति' हेतु इसका टेप से अनुलेखन स्वर्गीय श्री राजेन्द्र तिवारी जी और सम्पादन स्वामी प्रपत्त्यानन्द जी ने किया है। – सं.)

इसीलिए श्रीभरत का अभिप्राय यह था कि समस्या का तात्कालिक समाधान ही मत ढूँढ़िए। तात्कालिक समाधान ढूँढ़ने की वृत्ति भी व्यक्ति में बहुधा होती है। जैसे सिर में यदि पीड़ा हो, तो तत्काल तो व्यक्ति को यही इच्छा होती है कि किसी प्रकार से इस सिर-दर्द से छुटकारा मिले और यह अस्वाभाविक नहीं है। ऐसी दवाईयाँ बिकती हैं, जिसको व्यक्ति सिर में लगा लेता है, तो सिर में ठंडक की अनुभूति होती है। ऐसी गोलियाँ हैं, जिनको खा लेने पर दर्द की अनुभूति समाप्त हो जाती है। लेकिन यदि व्यक्ति इसी प्रकार दवा लगाने का और दवा खाने का अभ्यस्त बन जाये, तो वस्तुत: वह रोग को निमन्त्रित कर रहा है। तात्कालिक चिकित्सा के स्थान पर उसे इस बात का पता लगाना चाहिए कि मेरे सिर में बार-बार पीड़ा क्यों हो रही है? उस लक्षण की चिकित्सा न करके उसके कारण की चिकित्सा की जाये। श्रीभरत ने यही कहा कि गुरुदेव इस समय लक्षण की चिकित्सा कर रहे हैं, कारण की चिकित्सा नहीं कर रहे हैं। केवल एक बात दिखाई दे रही है कि अयोध्या में महाराज दशरथ नहीं हैं। राजा नहीं हैं, राजा की आवश्यकता है, भरत को सिंहासन पर बैठा दो। श्रीभरत ने कहा –

कहउँ साँचु सब सुनि पतिआहू।

राजा की ही आवश्यकता है, ऐसी बात नहीं है, बल्कि उन्होंने एक नया शब्द दिया। उन्होंने कहा कि अयोध्या को केवल राजा ही नहीं चाहिए। उससे भी आगे बढ़कर उन्होंने कहा कि धार्मिक राजा होने से भी काम नहीं चलेगा। धर्म के साथ उन्होंने एक शब्द जोड़ दिया। उन्होंने कहा –

कहउँ साँचु सब सुनि पतिआहू।
चाहिअ धरमसील नरनाहू।। २/१७८/१

उन्होंने दृष्टान्त देते हुए कहा, साधारण व्यक्तियों ने, जिन्होंने अन्यायपूर्वक सत्ता प्राप्त किया, वे तो अन्याय करने वाले सिद्ध होंगे ही। यह तो स्वाभाविक है। लेकिन जिन्होंने धर्मपूर्वक अधिकार प्राप्त किया, सत्ता प्राप्त की ऐसे व्यक्ति भी बहुधा सत्ता प्राप्त करने के बाद बदल जाते हैं। उनके जीवन में भी विपरीत क्रियाएँ दिखाई देती हैं। रामायण में इसकी ओर संकेत किया गया। रामायण में यहाँ तक चुनौती दे दी गई, यहाँ तक दावा कर दिया गया कि –

नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं।
प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं।। १/५९/८

संसार में ऐसे किसी व्यक्ति का जन्म ही नहीं हुआ है, जिसको प्रभुता पाकर मद न हो जाये। यह बात तो प्राकृतिक रूप से सर्वत्र दिखाई ही देती है। इसका अभिप्राय यह है कि पद को मद में बदलते देर नहीं लगती। इसलिए शब्द-शास्त्र में शब्दों की जो रचना की गई है, वह बड़ा समझ-बूझकर की गई है। आप पद लिखिए और उसे मद के रूप में परिवर्तित करना चाहें, तो वह इतनी सरलता से परिवर्तित हो जाएगा कि और कोई शब्द इतनी सरलता से परिवर्तित नहीं हो सकता। बस 'प' के कोने में एक छोटा-सा शून्य लगा दीजिए 'म', बस पद मद बन गया। इसका अभिप्राय यह है कि पद में अभिमान जुड़ा कि पद मद हो जाता है। मद क्या है? जैसे अच्छा खासा बुद्धिमान व्यक्ति भी यदि शराब पी लेता है, तो मतवाला हो जाता है। इसी प्रकार से पद जब मद बन जाता है, तो अच्छे व्यक्तियों के जीवन में भी परिवर्तन आता है। लक्ष्मणजी ने भी इतिहास के ऐसे व्यक्तियों के नाम का स्मरण किया था, जो बड़े धार्मिक थे, पर धार्मिक होते हुए भी सत्ता पाने के बाद वे बदल गये।

श्रीलक्ष्मण ने भगवान राम से कहा था –

ससि गुर तिय गामी नघुषु चढ़ेउ भूमिसुर जान।
लोक बेद तें बिमुख भा अधम न बेन समान।।
२/२२८/०

सहसबाहु सुरनाथु त्रिसंकू।
केहि न राजमद दीन्ह कलंकू।। २/२२८/१

यह सत्ता ऐसी वस्तु है, पद ऐसा पदार्थ है। यह बात उस समय लक्ष्मणजी के मन में आई थी, जब उनके मन में यह कल्पना हुई थी कि भरत श्रीराम से युद्ध करने आ रहे हैं। तो श्रीभरत ने एक शब्द कहा, उन्होंने कहा कि केवल राजा नहीं, केवल धार्मिक राजा नहीं, बल्कि धर्मशील चाहिये –

चाहिअ धरमसील नरनाहू।।

यह धर्मशील माने क्या होता है? अगर हम यह कहें कि ये व्यक्ति बड़े धार्मिक हैं, तो धार्मिक व्यक्ति तो संसार में बहुत मिलेंगे, पर धर्मशील होना बड़ा कठिन है। उसकी सरल व्याख्या यह है कि जब तक कोई गुण अभ्यास के द्वारा जीवन में स्वीकार किया गया, तब तक वह गुण अभ्यास जन्य है, पर जब कोई गुण व्यक्ति के स्वभाव का अंग बन जाय, तब वह शील है। बस अन्तर इतना है। जब स्वभाव से अभिन्न कोई गुण हो गया, तो वह गुण उसका शील है, और जब तक वह केवल आचरण में दिखाई दे रहा है, तब तक वह उसका गुण है। इसीलिए रामायण में शील शब्द का प्रयोग धर्म शब्द के साथ जोड़ दिया जाता है। जैसे परीक्षा देने के लिए बहुत पढ़नेवाले विद्यार्थी के लिए कहेंगे कि यह विद्यार्थी अच्छा अध्ययन करता है। यह एक बात हुई। पर एक शब्द और कहा जाता है, रामायण में भी कई शब्दों के साथ इस शील शब्द को जोड़ दिया गया। भगवान राम ने जब नवधाभक्ति का उपदेश दिया, तो उन्होंने दम के साथ शील का प्रयोग किया –

छठ दम सील बिरति बहु करमा। ३/३५/२

मेरी छठवीं भक्ति है दमशील। व्यक्ति दमशील हो। दमपरायण व्यक्ति तो बहुत होते हैं, पर दमशील व्यक्ति बिरले होते हैं। दान देनेवाले तो बहुत होते हैं, पर दानशील बहुत नहीं होते। अध्ययन करनेवाले बहुत होते हैं, पर अध्ययनशील बिरले ही होते हैं।

क्षमाशील जे पर उपकारी।

क्षमाशील, दानशील, अध्ययनशील और इस शील का अभिप्राय यह है कि जब कोई गुण, कोई क्रिया व्यक्ति का स्वभाव बन जाय, उसे किये बिना वह रह ही न सके। तब क्या होता है? हम चाहकर भी उसे छोड़ नहीं पाते। स्वभाव बदल नहीं सकता और उसका अभिप्राय यह है कि जिस व्यक्ति का गुण ऐसा हो कि वह एक बार चाहे भी कि हम धर्म को छोड़ दें, तो उसका स्वभाव ऐसा बन गया है कि वह चाहकर भी उसे छोड़ नहीं सके। धर्म जिसका स्वभाव बन गया हो, उससे वह छूट ही नहीं पाता, वह धर्मशील है। यह जो शील शब्द है, वह किसी गुण को स्वभाव बना देने का ही नाम है।

इसीलिए बड़ी सांकेतिक गाथा आती है प्रह्लाद के सन्दर्भ में। प्रह्लाद तो समस्त गुणों से भरे हुए हैं और उनके गुणों का परिणाम यह हुआ कि स्वर्ग का जो सारा वैभव था, वह इन्द्र को छोड़कर प्रह्लाद के पास आ गया। अब प्रह्लाद तो भगवान के बड़े भक्त थे। इन्द्र भगवान से तो यह कह नहीं सकते कि आप प्रह्लाद से छीन लीजिए और हमें वापस दीजिए। तो उसने भगवान के सामने अपना दुखड़ा रोया कि महाराज, स्वर्ग का सारा सुख, सारा ऐश्वर्य तो प्रह्लाद के पास चला गया। ऐसी स्थिति में स्वर्ग उजड़ जा रहा है, कुछ उपाय बताइए। तो भगवान ने यही कहा कि प्रह्लाद से तुम लड़कर भी जीत नहीं सकते हो। अब एक ही उपाय है। प्रह्लाद बड़े दानशील हैं। तुम जाकर उनसे जो माँगना चाहो, वह माँगकर ले आओ। इन्द्र ने ब्राह्मण का वेष बनाया, प्रह्लाद की सभा में गये और माँगना प्रारम्भ किया। प्रह्लाद देते गये। इन्द्र ने स्वर्ग का सारा वैभव माँग लिया। प्रह्लाद ने दे दिया। उसके बाद प्रह्लाद के जीवन में जो सद्गुण थे, इन्द्र ने उन्हें भी माँगना प्रारम्भ किया। प्रह्लाद उन सद्गुणों को भी देते गये। अन्त में इन्द्र ने प्रह्लाद से यह कहा कि आप अपना शील दे दीजिए, तब प्रह्लाद ने कहा, यह मेरे लिए सम्भव नहीं है। शील देना सम्भव नहीं है, यह मेरे वश में नहीं है। इन्द्र ने कहा कि आपने वचन दिया था कि जो माँगोगे, दिया जाएगा। तो दो बातें उन्होंने कही। उन्होंने कहा कि एक तो शील मेरे स्वभाव का अंग है। मैं वस्तु दे सकता हूँ, पदार्थ दे सकता हूँ, पर अपने स्वभाव को दे सकना सम्भव नहीं है। स्वभाव तो स्वभाव है – **स्वभावो दुरतिक्रमः।** स्वभाव

शेष भाग पृष्ठ २०८ पर

गीतातत्त्व-चिन्तन (१२)

ग्यारहवाँ अध्याय

स्वामी आत्मानन्द

(ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्द जी महाराज रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के संस्थापक सचिव थे। उनका 'गीतातत्त्व-चिन्तन' भाग-१ और २, अध्याय १ से ६वें तक पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है और लोकप्रिय है। ८वाँ अध्याय 'विवेक ज्योति' के सितम्बर, २०१६ से नवम्बर, २०१७ अंक तक प्रकाशित हुआ था । अब प्रस्तुत है ११वाँ अध्याय, जिसका सम्पादन ब्रह्मलीन स्वामी निखिलात्मानन्द जी ने किया है। – सं.)

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या
जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च।
रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति
सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः।।३६।।

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) हृषीकेश (हे अन्तर्यामिन्!) स्थाने तव प्रकीर्त्या (यह उचित ही है कि आपकी कीर्ति को सुनकर) जगत् प्रहृष्यति च अनुरज्यते (जगत हर्षित और गद्‌गद हो रहा है) भीतानि रक्षांसि दिशः द्रवन्ति (राक्षस लोग भयभीत हो सब दिशाओं में भाग रहे हैं) च सर्वे सिद्धसंघाः नमस्यन्ति (और सब सिद्धगण आपको नमस्कार कर रहे हैं)।

''हे अन्तर्यामिन्! यह उचित ही है कि आपकी कीर्ति को सुनकर जगत हर्षित और गद्‌गद हो रहा है, राक्षस लोग भयभीत हो सब दिशाओं में भाग रहे हैं और सब सिद्धगण आपको नमस्कार कर रहे हैं।''

गद्‌गद अर्जुन

जब वाणी गद्‌गद् होती है, तब कुछ बोला नहीं जाता। ऐसा दो स्थितियों में होता है। एक तो हर्षातिरेक में और दूसरा शोक में। यहाँ पर संजय धृतराष्ट्र को एक बहुत सूक्ष्म संकेत देता है कि देखिए तो सही राजन् ! भगवान अर्जुन को बता रहे हैं कि कौरवपक्ष के ये जो चारों योद्धा हैं, जिन पर हमारी विजय आधारित है, उन्हें तो भगवान ने स्वयं ही मार दिया है। जरा विचार करके देखिए कि जब इन सबको भगवान ने मार दिया, तब बाकी योद्धाओं की क्या बिसात है? और अन्य वीरों को भी वे मार ही चुके हैं, ऐसा भगवान ने बताया है।

इसका अर्थ यह हुआ राजन् कि आपके सभी पुत्र भगवान के द्वारा मारे जो चुके हैं। तब आप क्यों युद्ध करते हैं? अभी भी संधि कर लीजिए। यही संजय का सूक्ष्म संकेत है, पर धृतराष्ट्र संजय के इस संकेत को ग्रहण नहीं करता। काल आकर उसके सिर पर खड़ा है न! संकेत को ग्रहण करे कैसे? अब संजय बता रहा है कि भयभीत गद्‌गद वाणी से अर्जुन ने भगवान को क्या कहा।

अर्जुन बोला – हे भगवन् ! आपकी कीर्ति, आपके नाम को सुनकर जब जगत हर्षित होता है, वह उचित ही है। आपका नाम समस्त कलुष को धोनेवाला, संस्कार करनेवाला और सबके पापों का नाश करनेवाला है। आपका नाम लेकर यह संसार हर्षित हो, इसमें अनुचित तो कोई बात नहीं है। आपके नाम में लोगों की अनुरक्ति होती है। इसमें भी कोई अनौचित्य नहीं है। आपके नाम के डर से राक्षसगण सभी दिशाओं में भागते हैं। सन्त शिष्ट हैं। जो सज्जन हैं, वे आपके नाम का गुणगान करके हर्षित होते हैं। सत् जनों का आपके नाम में अनुरक्त होना और दुष्ट जनों का आपका नाम सुनकर डरकर भागना, दोनों ही उचित है। ये जो महर्षिगणों और देवतागणों का समूह आपको बारम्बार नमस्कार कर रहा है, यह भी उचित ही है। प्रभो ! मैंने आपका यह जो दिव्यरूप देखा, उसमें आपके नाम को सुनकर सारे संसार को हर्ष हो रहा है। लोग आपके नाम पर अनुरक्त हैं और बड़े-बड़े महापुरुष, सिद्धगण सभी आपको बारम्बार नमस्कार कर रहे हैं। ऐसे अद्‌भुत दृश्य को देखकर मनुष्य विभोर हो जाता है और उसके गद्‌गद कण्ठ से वाणी निकलने लगती है। अब अर्जुन आगे कह रहा है –

ईश्वर का स्वरूप

कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन्
गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे।
अनन्त देवेश जगन्निवास
त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत्।।३७।।

महात्मन् ब्रह्मणः अपि आदिकर्त्रे (हे महात्मन्! ब्रह्मा के भी आदिकर्ता) च गरीयसे ते कस्मात् न नमेरन् (और सबसे बड़े आपके लिए वे कैसे नमस्कार न करें) अनन्त देवेश जगन्निवास (हे अनन्त ! हे देवेश ! हे जगन्निवास!) यत् सत् असत् तत्परम् (जो सत, असत् और उनसे परे) अक्षरम् त्वम् (अक्षर अर्थात् सच्चिदानन्दघन ब्रह्म है, वह आप ही हैं)

''हे महात्मन् ! ब्रह्मा के भी आदिकर्ता और सबसे बड़े आपको वे कैसे नमस्कार न करें, (क्योंकि) हे अनन्त ! हे देवेश ! हे जगन्निवास ! जो सत्, असत् और उनसे परे अक्षर अर्थात् सच्चिदानन्दघन ब्रह्म है, वह आप ही हैं।''

बहुत अद्भुत दृश्य देखकर मनुष्य विभोर हो जाता है और उसके गद्गद कण्ठ से वाणी निकलने लगती है, इसीलिए अर्जुन कह रहा है – हे महात्मन् ! ब्रह्मा के भी आदिकर्ता और सबसे बड़े आपको वे कैसे नमस्कार न करें ! क्योंकि हे अनन्त! हे देवेश ! हे जगन्निवास ! जो सत् (कारण), असत् (कार्य) और उनसे परे अक्षर (जिसका कभी नाश नहीं होता), अर्थात् सच्चिदानन्दघन ब्रह्म है, वह आप ही हैं। सत् और असत् कहने से अर्जुन का तात्पर्य यह है कि भगवान हैं, तो होने का बोध होता है और भगवान नहीं हैं, तो नहीं होने का बोध होता है। जिस प्रकार अस्तित्व का बोध होता है, उसी प्रकार अस्तित्वहीनता का भी बोध होता है। वही एक ईश्वर दोनों के भीतर समाया है। यह बोध कभी नष्ट नहीं होता। इन्द्रियों के द्वारा जो दिखाई देता है, उसे कहते हैं कि है और इन्द्रियों से जो दिखाई नहीं पड़ता, उसे कहते हैं कि नहीं है। भगवान इन दोनों श्रेणियों से ऊपर हैं, पर ये दोनों श्रेणियाँ भी भगवान के ही कारण मालूम पड़ती हैं। नहीं होने का भी तो एक भाव होता है। हमें जो नहीं होने का बोध होता है, वह बोध ही साक्षात् भगवान है। होने और नहीं होने का जो बोध है, वह दोनों में समान रूप से समाया हुआ है और वह कभी नष्ट नहीं होता। वह अक्षर है, सदा स्थायी है। इसीलिए भगवान में कभी परिवर्तन नहीं होता। भगवान सत् के भाव और असत् के भाव में सीमित नहीं हैं। उनसे भी परे वे परमतत्त्व हैं।

अभिभूत हृदय से वही बात अर्जुन बार-बार कह रहा है –

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराण-
स्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम
त्वया ततं विश्वमनन्तरूप।।३८।।

त्वम् आदिदेवः पुराणः पुरुषः (आप आदिदेव सनातन पुरुष हैं) त्वम् अस्य विश्वस्य परम् निधानम् (आप इस जगत के परम आश्रय) च वेत्ता च वेद्यम् (और जाननेवाले तथा जानने योग्य) परमम् धाम असि (परम धाम हैं) अनन्तरूप त्वया विश्वम् ततम् (हे अनन्तरूप ! आपसे यह जगत व्याप्त है)।

''आप आदिदेव सनातन पुरुष हैं, आप इस जगत के परम आश्रय और जाननेवाले तथा जानने योग्य परम धाम हैं। हे अनन्तरूप ! आपसे यह जगत व्याप्त है।''

अर्जुन कह रहा है – आप आदिदेव और पुराण पुरुष हैं। शरीर को पुर के नाम से पुकारा गया और उसके भीतर निवास करनेवाला वह पुरुष है। किसी भी प्रकार से शरीर की उत्पत्ति हुई हो, उस शरीर में तत्त्व के रूप में निवास करनेवाले पुरुष आप पुराण पुरुष हैं। इस विश्व के परम आश्रय हैं। आप सबके जानकार हैं और आप ही जानने योग्य भी हैं। आपने संसार को प्रकट किया। पुरुष बनकर सबके भीतर आप ही विद्यमान हैं, इसलिए एकमात्र आप ही जाननेवाले हैं। संसार में जानने योग्य कुछ है, तो एक भगवान ही हैं। मरने के बाद मनुष्य जहाँ जाने की इच्छा करता है, वह परमधाम भी आप ही हैं। इस विश्व में जितने भी रूप दिखाई देते हैं, वे सब आपके ही रूप हैं। इसीलिए अनन्त कहलाते हैं। फिर कहा –

अनन्त ईश्वर

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः
प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः
पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते।।३९।।
नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते
नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व।
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं
सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः।।४०।।

त्वम् वायु: यम: अग्नि: वरुण: शशांक: प्रजापति: (आप वायु, यम, अग्नि, वरुण, चन्द्रमा, ब्रह्मा) च प्रपितामह: ते सहस्रकृत्व: नम: (और उनके पिता हैं, आपको हजारों बार नमस्कार !!) नम: अस्तु (नमस्कार हो !!) ते भूय: अपि पुन: च नम: नम: (आपके लिए फिर से बारम्बार नमस्कार!!) अनन्तवीर्य ते पुरस्तात् (हे अनन्तवीर्य! आपको आगे से) अथ पृष्ठत: नम: (और पीछे से भी नमस्कार !) सर्व ते सर्वत: एव नम: अस्तु (हे सर्वात्मन् ! आपको सब ओर से ही नमस्कार हो) अमितविक्रम: त्वम् सर्वम् समाप्नोषि (अनन्त पराक्रमी आप सबको व्याप्त किए हुए हैं) तत: सर्व: असि (आप ही सर्वरूप हैं)।

''आप वायु, यम, अग्नि, वरुण, चन्द्रमा, ब्रह्मा और उनके पिता हैं, आपको हजारों बार नमस्कार ! नमस्कार हो!! आपके लिए फिर से बारम्बार नमस्कार!!''

''हे अनन्तवीर्य ! आपको आगे से और पीछे से भी नमस्कार ! हे सर्वात्मन् ! आपको सब ओर से ही नमस्कार हो। अनन्त पराक्रमी आप सबको व्याप्त किए हुए हैं, आप ही सर्वरूप हैं।''

इस विश्व में जितने भी रूप दिखाई देते हैं, वे सब आपके ही रूप हैं। इसीलिये अनन्त कहलाते हैं। वायु भी आप ही हैं, यम, अग्नि, वरुण, चन्द्रमा, प्रजा के स्वामी ब्रह्मा और ब्रह्मा के पिता भी आप ही हैं। आपको हजारों बार नमस्कार। नमस्कार हो। आपको फिर भी बार-बार नमस्कार। इतना कहकर भी अर्जुन रुकता नहीं। कहता है – हे अनन्त सामर्थ्यवाले ! आपको आगे से और पीछे से भी नमस्कार! हे सर्वात्मन् ! आपको सभी ओर से नमस्कार ! अब कहाँ तक गिनाएँ? यहाँ भगवान के नामों में अनन्तवीर्य और अनन्तविक्रम दो अलग-अलग नाम हैं। वीर्य का अर्थ है – बल या तेज। कोई शक्तिशाली तो हो सकता है, पर वह पराक्रमी भी हो, यह आवश्यक नहीं। शरीर में बल हो, पर उस बल का वह ठीक-ठीक प्रयोग करना भी जानता हो, यह आवश्यक नहीं। भगवान में वीर्य भी अनन्त है और उनका पराक्रम भी अनन्त, सीमारहित है। वे सबमें व्याप्त हैं। **(क्रमशः)**

पृष्ठ २०५ का शेष भाग

का अतिक्रमण करना कठिन है।

एक बड़ी मीठी बात उन्होंने इन्द्र से कह दी कि शील देना मेरे लिए सम्भव नहीं है और आपके लिए भी लाभप्रद नहीं है। क्यों? क्योंकि यह देना मेरा शील है,तभी तो आप सब माँगे चले जा रहे हैं और मैं देता चला जा रहा हूँ। मेरा शील ही अगर चला जाएगा, तब तो वह सब मैं वापस ले ले लूँगा, जो आपको दिया हूँ। फिर आप कुछ लेकर थोड़े ही जा सकेंगे। इसलिए आप शील मुझसे मत माँगिये। तब परिणाम यह हुआ कि जिन वस्तुओं को प्रह्लाद ने दे दिया था, वे भी प्रह्लाद के शील के कारण प्रह्लाद के पास लौट आईं। ऐसी कथा महाभारत में आती है।

वस्तुत: श्रीभरत ने समाधान सच्चे अर्थों में दिया। उन्होंने कहा, आप लोग राजा के लिए बेचैन मत होइए। भले ही विलम्ब हो, लेकिन आपको एक ऐसे राजा की आवश्यकता है, जो केवल धार्मिक राजा न हो, धरमशील भी हो – चाहिए धरमसील नरनाहू।

यहाँ हमारे गुरुदेव इतने उतावले हो गये हैं कि वे मुझे राज्यसिंहासन पर बैठाना चाहते हैं। उलाहने के स्वर में श्रीभरत ने एक वाक्य कहा। बोले, मैं एक ही निष्कर्ष पर पहुँचा क्या?

गुर बिबेक सागर जगु जाना।
जिन्हहि बिस्व कर बदर समाना।।
मो कहँ तिलक साज सज सोऊ।
भएँ बिधि बिमुख बिमुख सबु कोऊ।।

२/१८१/१-२

आज मुझे लग रहा है कि ब्रह्मा विपरित होते हैं, तो गुरु भी विपरीत हो जाते हैं। यह उलाहना था। मानो इसमें व्यंग्य भी था। व्यंग्य यह था कि वशिष्ठजी ब्रह्मा के पुत्र हैं। बोले, जब बाप ही प्रतिकूल है, तब बेटा भी प्रतिकूल हो जाये, इसमें क्या आश्चर्य है? जब ब्रह्मा ने ही इतने बड़े अनर्थ की सृष्टि कर दी तो ब्रह्मा के पुत्र भी उसी बात का समर्थन कर रहे हैं तो इसमें मुझे कोई आश्चर्य नहीं है और तब भरत ने मद को लेकर अपना निदान प्रस्तुत किया। **(क्रमशः)**

महाकालपञ्चकम्

डॉ. सत्येन्दु शर्मा, रायपुर

निवासं करोष्युज्जयिन्यां नगर्यां
जनन्या भवान्या हि साकं सदा त्वम् ।
स्वभक्तप्रसादाय संसक्तचित्तो
महाकाल! तुभ्यं नमस्ते नमस्ते ।।१।।

अर्थ – तुम अपने भक्तों की प्रसन्नता के लिये माता भवानी के साथ आसक्तचित्त होकर उज्जयिनी नगरी में हमेशा निवास करते हो। हे महाकाल, तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।

कपाली पिनाकी त्रिशूली त्रिनेत्रे
ललाटे च चन्द्रो गले सर्पमाला ।
जटाजूटमध्ये लसन्तीह गङ्गा
महाकाल! तुभ्यं नमस्ते नमस्ते ।।२।।

अर्थ – तुम त्रिनेत्रधारी हो, कपालधारी हो, पिनाक नामक धनुष और त्रिशूल धारण करते हो, ललाट पर चन्द्रमा और गले में सर्पों की माला धारण करते हो, तुम्हारी जटाओं के बीच में गंगा शोभित होती है। हे महाकाल, तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।

स्मरन्ति स्तुवन्त्यर्चयन्तीह भक्त्या
लभन्ते मनोवाञ्छितं ते कृपालोः ।
गृहीताश्रयानां समुद्धारकर्ता
महाकाल! तुभ्यं नमस्ते नमस्ते ।।३।।

अर्थ – यहाँ उज्जयिनी नगरी में जो भी भक्ति से तुम्हारा पूजन, स्तुति या स्मरण करता है, वह तुझ कृपालु से अपना मनोवांछित प्राप्त कर लेता है। अपना आश्रय ग्रहण करनेवालों का तुम उद्धार करते हो। हे महाकाल, तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।

नियन्ता प्रभुः सर्वसन्तापहारी
स्वभक्तापदामाशु संहारकारी ।
न मे बान्धवः कोऽपि लोके त्वदन्यो
महाकाल! तुभ्यं नमस्ते नमस्ते ।।४।।

अर्थ – तुम जगत के नियन्ता हो, स्वामी हो, सबके सारे सन्ताप हरने वाले हो। अपने भक्तों की विपत्तियों को शीघ्र नष्ट

करने वाले हो। तुम्हारे अतिरिक्त संसार में मेरा अपना कोई बन्धु नहीं है। हे महाकाल, तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।

महाकाल माता पिता चाप्यसि त्वं
विना ते कृपां मङ्गलं नास्मदीयम् ।
स्वपादाम्बुजं देहि कल्याणकारिन् !
महाकाल! तुभ्यं नमस्ते नमस्ते ।।५।।

अर्थ – हे महाकाल देव, तुम्हीं माता हो और पिता भी हो, तुम्हारी कृपा के बिना हमारा मंगल नहीं हो सकता। इसलिए हे कल्याणकारी देव, तुम अपना चरण कमल प्रदान करो। हे महाकाल, तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।

ध्यात्वा देवं महाकालं श्रद्धया तु पठन्ति ये ।
सर्वशोकविनिर्मुक्ताः प्राप्स्यन्ति ते मनोरथान् ।।

अर्थ – भगवान् महाकाल का ध्यान करके जो भी इस स्तोत्र का श्रद्धा से पाठ करते हैं, वे सारे शोकों से मुक्त होकर अपने मनोरथ प्राप्त करते हैं।

साधुओं के पावन प्रसंग (५०)

स्वामी चित्प्रकाशानन्द और स्वामी रघुवरानन्द

स्वामी चेतनानन्द

(स्वामी चेतनानन्द जी महाराज से रामकृष्ण संघ के भक्त भलीभाँति परिचित हैं। वर्तमान में महाराज वेदान्त सोसायटी, सेंट लुइस के मिनिस्टर-इन-चार्ज हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द और वेदान्त पर अनेक पुस्तकें लिखी और अनुवाद की हैं। प्रस्तुत पुस्तक में रामकृष्ण संघ के महान त्यागी संन्यासियों के संस्मरण हैं, जिनके सम्पर्क में लेखक स्वयं आए थे। 'विवेक ज्योति' के पाठकों हेतु मूल बंगला से इसका हिन्दी अनुवाद धारावाहिक रूप से दिया जा रहा है। – सं.)

स्वामी चित्प्रकाशानन्द (-१९८३)

वृद्ध, अस्वस्थ और तपस्यारत संन्यासियों के प्रति मेरे मन में बहुत आकर्षण था और अभी भी है। समय मिलने पर मैं उनके पास जाकर उनके जीवन के अनुभव को सुनता था। अध्यात्म जीवन में बाधा-विपत्ति, संग्राम और सिद्धि के बारे में जानकारी प्राप्त करने की इच्छा मेरे भीतर सदा है। बहुतों को देखा हूँ इनलोगों से नहीं मिलते, दूर रहते हैं। मैं इनलोगों के साथ वार्तालाप करके आनन्द पाता हूँ।

काशी सेवाश्रम का १० नम्बर वार्ड अवकाशप्राप्त और अस्वस्थ संन्यासियों का निवास स्थान था। १६/०८/१९८२ को स्वामी चित्प्रकाशानन्द (तरिणि महाराज) के कमरे में गया। महाराज जीवन के अन्त समय में अंधे हो गये थे। मेरे द्वारा अपना परिचय देने पर उन्होंने कहा, ''सुनो, मैं १९१३ ई. में मठ में सम्मिलित हुआ था। राजा महाराज ने मुझे दीक्षा दी। उनसे संन्यास माँगने पर उन्होंने नृत्य करना आरम्भ कर दिया। १९२३ ई. में जयरामवाटी में शरत महाराज ने मुझे संन्यास दिया।

''देखो भाई, मैं आँख से नहीं देख पाता हूँ, किन्तु एक घण्टा भजन गा सकता हूँ। (इतना कहकर उन्होंने यह भजन गाना आरम्भ कर दिया)

मैं दुर्गा, दुर्गा, दुर्गा कह यदि मरूँ माँ री।
इस दीन को आखिर क्यों नहीं तारोगी देख लूँगा मैं शंकरी।।
हत्या कर गौ ब्राह्मण भ्रूण की मत रहूँ मैं सुरा सुन्दरी।
इन सब पापों की नहीं परवाह, ब्रह्मपद मैं लूँगा ही री।।

''मैंने श्रीमाँ का दर्शन किया है। अभी कभी कर-जप और कभी माला से जप करता हूँ। स्मरण-मनन है। उम्र ९० वर्ष से अधिक है।''

इन वृद्ध संन्यासी ने मुझे उन अन्धे संन्यासी का स्मरण करवा दिया, जो एक दूसरे संन्यासी का हाथ पकड़कर केदारनाथ का दर्शन करने गये थे। अन्य संन्यासी ने उनसे कहा, ''तुम्हारी आँखें तो नहीं हैं। इतना कष्ट उठाकर इतने दूर क्यों आये?'' अन्धे संन्यासी ने उत्तर दिया, ''यह सही है कि भगवान का दर्शन करने के लिए मेरे पास आँखें नहीं हैं, किन्तु बाबा केदारनाथ ने तो मुझे देखा है।''

स्वामी रघुवरानन्द (१८९५-१९८३)

काशी में ०२/१०/१९७७ ई. को स्वामी रघुवरानन्द (रामप्रसाद महाराज) के साथ मेरा परिचय हुआ। तपस्वी संन्यासियों के प्रति मेरे मन में सदा से आकर्षण रहा है। किस प्रकार वे लोग समय व्यतीत करते हैं, इसे जानने की मेरी बहुत इच्छा रहती है। जब मैं भारत आता हूँ, तब साधुसंग करने के लिए काशी, कनखल, बेलूड़ मठ जाता हूँ। उनलोगों से उनकी स्मृतिकथा और उनका अनुभव सुनता हूँ। क्रिस्मस के समय अमेरिका के भक्तगण कुछ उपहार देते हैं, उससे मैं वृद्ध, अस्वस्थ, तपस्यारत संन्यासियों को यथासम्भव सहायता करता हूँ। रामप्रसाद महाराज को बीच-बीच में पैसा भेजता था।

२२/१२/१९७८ ई. को महाराज ने अपने साधु-जीवन के सम्बन्ध में एक लम्बा पत्र काशी से लिखा। १९१७ ई. में वे काशी सेवाश्रम में सम्मिलित हुए। १९१८ ई. में राजा महाराज ने उन्हें ब्रह्मचर्य दीक्षा दी। वे माँ-बाप की एकमात्र सन्तान थे। पिताजी की मृत्यु होने पर स्वामी शुभानन्द जी ने उनको जन्मदायिनी माँ की सेवा के लिए घर भेज दिया। अन्त में, माँ को साथ में ले आकर काशी सेवाश्रम में वे संन्यासी हुए। उन दिनों उन्होंने हरि महाराज की कुछ सेवा की थी। १९२३ ई. में उन्होंने महापुरुष महाराज से मन्त्रदीक्षा प्राप्त की और १९२८ ई. में संन्यास ग्रहण किया। तदनन्तर दीर्घ समय तक वे कनखल सेवाश्रम के अध्यक्ष थे और १९५४ ई. में अवकाश ग्रहण करके बालोंगंज में दो वर्ष थे तथा गुरुदास महाराज की सेवा की थी। १९५६ ई. से नौ वर्ष तक तपस्या किये। तत्पश्चात् १९६५ ई. से वे आमरण

काशी में ही थे।

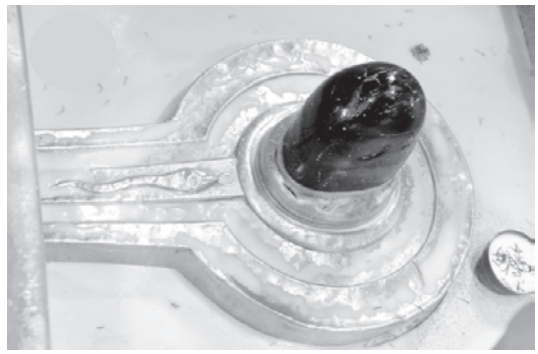

वे काशी सेवाश्रम के १० नम्बर वार्ड में थे। मैं देखता कि वे दिन-रात जप-ध्यान और शास्त्र-अध्ययन में मग्न हैं। १९८२ ई. में काशी जाने पर वे मुझे २७ अगस्त को चौखम्बा में प्रमदादास मित्र का घर दिखाने के लिए ले गये और जिस गोपाललाल-विला में स्वामीजी थे, उस घर को दिखाया। अभी वहाँ पर एक विद्यालय हुआ है।

एक दिन (१६/०८/१९८२) रामप्रसाद महाराज के कमरे में जाकर देखा कि वे बाजार से कुछ काशी का अमरूद खरीदकर जाम तैयार कर रहे हैं। मैंने पूछा, ''महाराज, आप यह क्या कर रहे हैं?'' उन्होंने कहा, 'देखो, इस १० नम्बर वार्ड में बहुत-से वृद्ध संन्यासी हैं। उनके मुँह में अरुचि है। इसीलिए उनके लिए यह अमरूद का जाम तैयार कर रहा हूँ।'' यह कार्य यद्यपि सामान्य और नगण्य है, तथापि उनका प्रेम अद्भुत और अतुलनीय है। तदुपरान्त उन्होंने मुझे दो आरारोट बिस्कुट के बीच में दो चम्मच जाम लगाकर खाने के लिए दिया। उनके प्रेम से मैं बहुत अभिभूत हुआ। उसी दिन महाराज ने मुझे एक मूल्यवान सम्पत्ति दान की, वह था अध्यापक गुरुदास गुप्त की दैनन्दिनी, जिसमें ठाकुर के पार्षदों एवं रामकृष्ण संघ के अनेक विशिष्ट संन्यासियों की स्मृतिकथा संरक्षित थी।

१९७८ ई. में मैंने उनसे पुरश्चरण के सम्बन्ध में प्रश्न किया। उन्होंने इस सम्बन्ध में विस्तार से बताया था। अन्त में लिखा, ''काशी में आया था, किन्तु अभी भी श्रीविश्वनाथ कृपा करके मुक्ति नहीं दे रहे हैं। उनकी ही इच्छा पूर्ण हो, उसी विश्वास को लेकर उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। वे ही जानते हैं कि कब कृपा करेंगे।'' काशी में १८ वर्ष रहकर ०७/०९/१९८३ दिनांक को उन्होंने ८८ वर्ष की आयु में शरीर-त्याग किया। **(क्रमशः)**

पृष्ठ २०० का शेष भाग

आधुनिक भारतीय पुत्रियों के लिए शिक्षा के असीम अवसर विद्यमान हैं। हम देखते हैं कि आधुनिक भारतीय नारी आज इन अवसरों का उपयोग कर जीवन को सार्थक तथा स्वावलम्बी बनाने में प्रयासरत हैं। आज भारतीय नारी सुशिक्षित होकर उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रही हैं। देश के कल्याण के लिए – चाहे वह समाजिक स्तर पर हो, शिक्षा के क्षेत्र में, विज्ञान के क्षेत्र में हो, खेल के क्षेत्र में – उनका योगदान अपरिहार्य है। वास्तव में मीराबाई चानू हम सबके लिए एक प्रेरणस्रोत है। ○○○

प्रकाशन सम्बन्धी विवरण

(फार्म ४ नियम ८ के अनुसार)

१. प्रकाशन का स्थान – रायपुर

२. प्रकाशन की नियतकालिकता – मासिक

३.-४. मुद्रक एवं प्रकाशक – स्वामी अव्ययात्मानन्द

५. सम्पादक – स्वामी प्रपत्त्यानन्द

राष्ट्रीयता – भारतीय

पता – रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर (छ.ग.)

स्वत्वाधिकारी – रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ के ट्रस्टीगण – स्वामी स्मरणानन्द, स्वामी प्रभानन्द, स्वामी गौतमानन्द, स्वामी सुहितानन्द, स्वामी भजनानन्द, स्वामी गिरीशानन्द, स्वामी विमलात्मानन्द, स्वामी दिव्यानन्द, स्वामी सुवीरानन्द, स्वामी बोधसारानन्द, स्वामी तत्त्वविदानन्द, स्वामी बलभद्रानन्द, स्वामी सर्वभूतानन्द, स्वामी लोकोत्तरानन्द, स्वामी ज्ञानलोकानन्द, स्वामी मुक्तिदानन्द, स्वामी ज्ञानव्रतानन्द, स्वामी सत्येशानन्द और स्वामी अच्युतेशानन्द।

मैं स्वामी अव्ययात्मानन्द घोषित करता हूँ कि ऊपर दिए गए विवरण मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य हैं।

(हस्ताक्षर)

स्वामी अव्ययात्मानन्द

भगवान थे, हैं और रहेंगे

स्वामी सत्यरूपानन्द

पूर्व सचिव, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर

यदि नाम का आश्रय नहीं है, तो मनुष्य संसार की चिन्ता में फँस जाता हैं। संसार भगवान से अलग नहीं है। भगवान सर्वदा सर्वत्र हैं, किन्तु हमें ऐसा बोध करना होगा। भगवान पहले भी थे, वर्तमान में भी हैं और भविष्य में भी रहेंगे।

माँ जैसी भावना होनी चाहिए। जैसे माँ की लालसा रहती है कि मेरा बेटा कैसे सुखी रहे। माँ में पवित्रता, शरणागती और सेवा का भाव रहता है। बेटा कुपुत्र हो सकता है, पर माँ कभी भी कुमाता नहीं होती। वह अपने बेटे का सर्वत्र कल्याण ही चाहती है। माँ के जैसी भावना अपने मन में आनी चाहिए।

पल-पल बीत रहे जीवन पर ध्यान देना चाहिये और उसे व्यर्थ न गँवाकर भगवान में लगाना चाहिये। एक भजन में है न –

बालपन खेल में खोया,
जवानी नींद भर सोया,
बुढ़ापा देखकर रोया,
उमरिया बीती जाती है।

यह स्थिति है मानव-जीवन की। मन में धीरे-धीरे ये भावना आनी चाहिए कि संसार हमारा घर नहीं है, हमारा सच्चा घर तो भगवान के धाम में है। हमारे सर्वस्व भगवान हैं। इसलिये भगवान के चरणों में शरणाति का भाव रखना चाहिए। जप के समय नाम और नामी एक ही हैं, ऐसा भाव रखना चाहिए। ऐसा विश्वास रखना चाहिए कि मेरी पुकार भगवान सुन रहे हैं। जप करने बैठे, तब ऐसा सोचना चाहिये कि मेरा मन शान्त पवित्र हो रहा है। भगवान तो पूर्णिमा की ज्योति के समान हैं। मेरे हृदय का द्वार खुल गया है। मेरी आत्मा की ज्योति का और भगवान की ज्योति का मिलन हो रहा है, ऐसा सोचना चाहिये। ऐसी कल्पना का आश्रय लेकर भगवान का ध्यान करना चाहिए। हमेशा ध्यान रहे, मन कहीं भी जाये, भगवान की ज्योति में ही विलीन करना है।

धर्म की परिभाषा यह है कि अपने और अन्य के कल्याण के लिए जो कुछ किया जाता है, वह धर्म है, शेष सब अधर्म है। हमारा जीवन सरल होना चाहिए। मन-मुख एक होना चाहिये। जीवन में सरलता, निष्कपटता होनी चाहिये। मन-मुख एक न होना, हमारे चरित्र का दोष है। चरित्र को निर्दोष, निष्कलंक रखें। संसार में जड़ नाम की कोई वस्तु नहीं है। सर्वत्र वह चैतन्य सत्ता ही व्याप्त है।

मनुष्य के जीवन का मापदण्ड क्या है? मापदण्ड यह है कि हमारा हृदय मातृवत् होना चाहिए। हृदय में मनुष्य को सुख-दुख की अनुभूति होती है। हमारा चित्त जब शुद्ध रहेगा, तब हमारे मन में स्वार्थ नहीं होगा। स्वार्थ मन को कलुषित कर देता है। मनुष्य केवल सुख चाहता है। सुविधाओं का सुख चाहता है। कैसा सुख चाहता है? वह सुख जो कभी समाप्त न हो। पर ऐसा होता नहीं है।

संसार में सबसे सद्भावपूर्वक रहो। सहन करो। ठाकुर बोलते थे, श, ष, स। अर्थात् सहन करो। शास्त्र में कहा गया है –

सहनं सर्वदुःखानामप्रतिकारपूर्वकम्।
चिन्ता-विलापरहितं सा तितिक्षा निगद्यते।।

सहन करने से मन में दुख नहीं होता। जो सहे, वह रहे। हमें अपने सम्मुख सर्वदा उच्च आदर्श रखना चाहिए। उस आदर्श को प्राप्त करने के लिये सदा सच्चाई से प्रयत्नशील रहना चाहिये। हमेशा प्रयास करते रहें। अभ्यास करने से सब हो जाता है। हम कितनी मात्रा में कर सकते हैं, यह सोचना चाहिए। जीवन की आपाधापी में यदि प्रतिदिन सम्भव न हो, तो कम-से-कम सप्ताह में भगवान का स्मरण-मनन-जप-ध्यान के लिए समय अवश्य निकालना चाहिए। ○○○

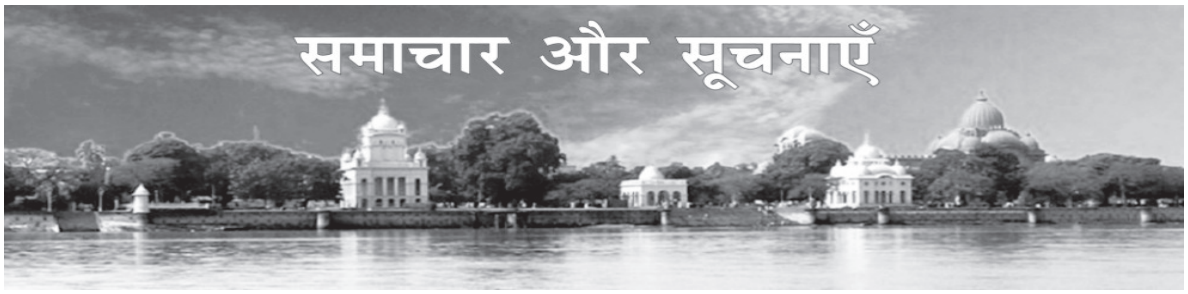

रामकृष्ण मिशन की 113वीं वार्षिक साधारण सभा

रामकृष्ण मिशन की 113वीं वार्षिक साधारण सभा आज, रविवार 18 दिसम्बर, 2022 को 3 बजकर 30 मिनट पर बेलूड़ मठ में आयोजित हुई, जिसमें रामकृष्ण मठ व मिशन के महासचिव स्वामी सुवीरानन्द जी महाराज द्वारा वित्तीय वर्ष 2021-22 में संस्था के कार्यों के सम्बन्ध में रामकृष्ण मिशन की संचालन समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी। रिपोर्ट का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है :

1. पुरस्कार एवं सम्मान :

(अ) राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद (NAAC)) द्वारा बेलूड़ विद्या मन्दिर आवासीय महाविद्यालय (पश्चिम बंगाल) को A++ ग्रेड एवं नरेन्द्रपुर आवासीय महाविद्यालय (पश्चिम बंगाल) को A+ ग्रेड अगले 5 वर्षों तक के लिए प्रदान किया गया।

(ब) राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग फ्रेमवर्क (NIRF), शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार द्वारा रामकृष्ण मिशन के चार महाविद्यालयों को विशेष वरीयता प्रदान की गयी – बेलूड़ विद्यामन्दिर आवासीय महाविद्यालय (पश्चिम बंगाल) 5 वाँ स्थान, रहड़ा विवेकानन्द शताब्दी महाविद्यालय (पं. बंगाल) 15वाँ स्थान, नरेन्द्रपुर आवासीय महाविद्यालय (पश्चिम बंगाल) - 21वाँ स्थान एवं कोयम्बटूर महाविद्यालय कला एवं विज्ञान (तमिलनाडू) - 48 वाँ स्थान।

(स) नीति आयोग भारत सरकार द्वारा हायर सेकेण्डरी स्कूल, अगरतला (त्रिपुरा) को साइबर स्मार्ट विद्यालय प्रमाणित किया गया।

2. नवीन केन्द्र :

(अ) रामकृष्ण मिशन के पश्चिम बंगाल में तीन नये केन्द्र : (कृष्णा नगर, नवद्वीप एवं सोमनाथ) एवं एक डिगबोई (असम) में प्रारम्भ किये गये हैं।

(ब) रामकृष्ण मठ के तीन नये केन्द्र – गुजरात (अहमदाबाद) कर्नाटक (मदिहल्ली) एवं तमिलनाडू (तंजौर) में प्रारम्भ किये गये हैं।

3. भारत में गतिविधियाँ :

रामकृष्ण मिशन एवं मठ द्वारा अपने 216 भारतीय केन्द्रों और उप-केन्द्रों के माध्यम से निम्नांकित सेवाओं में कुल 943.18 करोड़ रुपये व्यय किये गये।

सेवा क्षेत्र का नाम	कुल लाभान्वितों की संख्या (लाख में)	व्यय की राशि (करोड़ में)
राहत एवं पुनर्वास	15.95	26.20
सामान्य जन कल्याण	24.77	27.62
चिकित्सा	57.09	337.75
शैक्षणिक	2.61	451.44
ग्राम विकास	29.80	87.16
साहित्य प्रकाशन	13.01	
	कुल	**943.18**

4. भारत के बाहर की गतिविधियाँ :

(अ) ऑकलैण्ड/न्यूज़ीलैंड में रामकृष्ण मठ से सम्बद्ध केन्द्र का शुभारम्भ किया गया।

(ब) रामकृष्ण मिशन एवं रामकृष्ण मठ भारत के बाहर 24 देशों के अपने 97 केन्द्रों और उपकेन्द्रों के द्वारा वेदान्त दर्शन के प्रचार प्रसार एवं विविध सेवा कार्यों में संलग्न है।

इस अवसर पर रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन द्वारा संचालित सेवा कार्यों को आगे बढ़ाने में मिशन के सदस्यों एवं मित्रों को उनके समर्थन एवं सहयोग हेतु हम उन्हें हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

स्वामी सुवीरानन्द
महासचिव

रामकृष्ण मठ, अहमदाबाद

ए-202/203, कल्याण टावर्स,
अल्फा वन मॉल के सामने,
वस्त्रपुर, अहमदाबाद 380054, गुजरात
ईमेल : ahmedabad@rkmm.org,
वेब : ahmedabad.rkmm.org
फोन : (079) 26303409/ +917016093126

विनम्र निवेदन

प्रिय भक्तो और मित्रो

हमें आपको यह बताते हुए खुशी हो रही है कि स्वयं स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्थापित रामकृष्ण मठ, बेलूड़ मठ, हावड़ा (पश्चिम बंगाल) द्वारा 'रामकृष्ण मठ, अहमदाबाद' को आधिकारिक रूप से उसके एक शाखा-केन्द्र के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई है ।

रामकृष्ण मठ, अहमदाबाद के भक्तों तथा अनुरागियों ने स्वामी विवेकानन्द द्वारा प्रतिपादित 'आत्मनो मोक्षार्थं जगत् हिताय च' के द्विविध आदर्शों को साकार रूप देने के लिए - साणंदा तालुका के लेखम्बा गाँव में 7.5 एकड़ भूमि का अधिग्रहण कर लिया है । उस स्थान पर एक भव्य रामकृष्ण मठ का निर्माण ही हमारा तात्कालिक उद्देश्य है ।

वर्तमान समय में, मठ द्वारा संचालित हो रहे आध्यात्मिक और सेवामूलक गतिविधियों के क्षेत्र को बढ़ाने और स्वामीजी के सपनों के राष्ट्र के रूप में भारत का निर्माण करने के लिए हम अपने सभी मित्रों, भक्तों, शुभचिन्तकों, ट्रस्टों और कॉर्पोरेट निकायों से हार्दिक निवेदन करते हैं कि वे निर्माण-कार्य में अधिक-से-अधिक योगदान करके इन परियोजनाओं को यथाशीघ्र पूरा करने में सहायता करें ।

'रामकृष्ण मठ, अहमदाबाद' को दिये गये सभी दान आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 80 जी के अन्तर्गत कर-मुक्त है ।

प्रथम चरण के विकास के लिए अनुमानित लागत

	रु. करोड़
01. भूखण्ड का विकास / मिट्टी भराई आदि	0.50
02. चहारदीवारी का निर्माण	1.20
03. सीमेंट-कांक्रीट की सड़क	1.00
04. वर्षा जल का प्रबन्धन	0.50
05. कार्यालय, सिक्योरिटी गार्ड तथा गार्डन स्टाफ क्षेत्र हेतु	0.30
06. साधु-निवास और अस्थाई प्रार्थना कक्ष	1.50
07. रसोईघर, भोजनालय तथा सर्विस स्टाफ रूम	0.50
08. भक्त-निवास	0.40
09. भूमि तथा उद्यान का विकास	0.50
10. जल प्रणाली तथा सीवेज निकास	0.30
11. फर्नीचर, बिजली, सौर ऊर्जा, सी.सी.टी.वी., इंटरनेट आदि।	0.50
12. चिकित्सा सेवा (मेडिकल सर्विस वैन आदि)	0.30
13. विद्युत आपूर्ति	0.20
14. अन्य विविध कार्य	0.30
प्रथम चरण का कुल अनुमानित व्यय	**रु. 8.00**

श्रीरामकृष्ण की सेवा में आपका
स्वामी प्रभुसेवानन्द
अध्यक्ष
रामकृष्ण मठ, अहमदाबाद

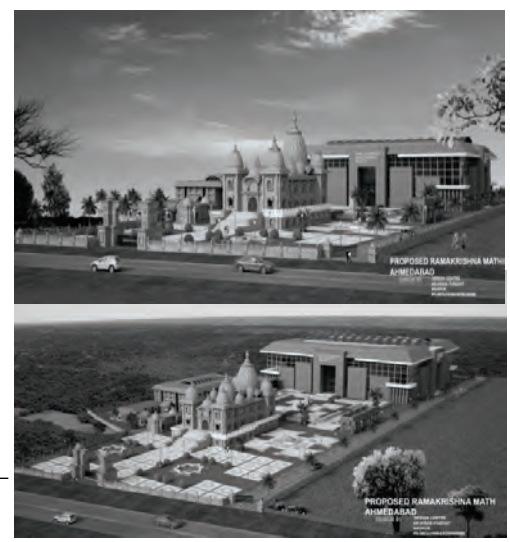

द्वितीय चरण : सम्भावित खर्च

श्रीरामकृष्ण का सार्वजनीन मन्दिर, सभागार, शैक्षणिक परिसर, छात्रों के लिये छात्रावास, स्वास्थ्य सुविधाएँ, विवेकानन्द संग्रहालय, सम्पूर्ण सौन्दर्यीकरण और उद्यान का विकास, साधु-निवास का अन्तिम चरण, रसोईघर, भोजनालय, सेवक-निवास और भक्तों के लिये आवास आदि।

अनुमानित लागत रु. 75 करोड़